

मुक्तक-कुसुमांजलि

सम्पादक

डा० राधेश्याम शर्मा

सहायक आचार्य

हिन्दी विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

बुक लैण्ड पब्लिशर्स

लालजी सांड का रास्ता, जयपुर-३

प्रकाशक

राजेश अग्रवाल
बुक बैंड पब्लिशर्स
सालजी साई का रास्ता, जयपुर-3

प्रथम संस्करण 1990

मूल्य 20 00 रु० --

मुद्रक अज्ञता प्रिण्टर्स
जयपुर ।

आमुख

‘मुक्तक कुसुमांजलि’ स्नातकोत्तर कक्षा के पाठ्यक्रम को दृष्टिगत रखकर तैयार किया गया मुक्तक काव्य का सकलन है। इसमें अषट्त्रिंशत् के कवि योगी-दुदेव (छठी-सातवीं शती) से लेकर दुष्यन्त कुमार तक के विशिष्ट कवियों की चुनी हुई रचनाएँ मगृहीत की गई हैं। रचनाओं के चयन में गुणात्मकता और विविधता के साथ इस बात का ध्यान रखा गया है कि मुक्तक काव्य परम्परा का विकासात्मक स्वरूप स्पष्ट हो सके।

भूमिका में मुक्तक के स्वरूप, वर्गीकरण तथा विकास के साथ सकलित मुक्तककार एवं उनकी रचनाओं का परिचय दिया गया है। इस विवेचन में मुक्तक-काव्य से सम्बन्धित सभी पहलुओं पर दृष्टिपात करते हुए विद्यार्थियों को स्वतंत्र चिन्तन की दिशा दी गई है, जो काव्य के मूल्यांकन के लिए उपयोगी है।

अन्त में शब्दायें और टिप्पणियाँ दिए गए हैं। योगी-दुदेव के सभी सकलित दोहों का सरलाय भी स्पष्ट किया गया है। भाशा है, यह सकलन विद्यार्थियों के लिए उपादेय होगा।

—सम्पादक

विषय-क्रम

भूमिका

- 1 मुक्तक परिभाषा एव स्वरूप
- 2 सङ्कलित मुक्तकवार
योगी दुदेव
तुलसीदास
रसखान
सुन्दरदास
पद्माकर
सूर्यमल्ल मिश्रण
शमशेरवहादुर सिंह
दुष्यन्तकुमार
- 3 शब्दाप टिप्पणी

भूमिका

मुक्तक परिभाषा एव स्वरूप

मुक्त शब्द में सशार्थक 'कन्' प्रत्यय जोड़ने से 'मुक्तक' शब्द बनता है जिसका अर्थ है—वह रचना जो अपना अर्थ व्यक्त करने के लिए पूर्वापर छन्द पर आश्रित न होकर अपने-आप में पूरा होती है। अग्निपुराण में कहा है

मुक्तक श्लोक एवैवचमत्कारक्षम सताम्'

अर्थात् मुक्तक एक ही श्लोक में सहृदयों के हृदय में चमत्कार उत्पन्न करने में सक्षम होता है। प्रबन्ध रचना के समान इसमें कथामूत्र एवं प्रवाह नहीं होता। मुक्तक अर्थ अभाव्यक्ति में स्वतः पूरा होने के साथ सहृदयों को आह्लादित करने में भी समर्थ होता है। इस लक्षण के अनुसार रसास्वाद में सक्षम होना, उसका एक आवश्यक गुण है। 'अग्निपुराण' के उपरान्त ध्वयानोक क टीकाकार आचार्य अभिनवगुप्त ने लिखा है

'मुक्तमयेनाऽऽसिगितम् । 'पूर्वापर निरपेक्षेणापि हि येन रसचवणा क्रियते तदव मुक्तकम् ।

अर्थात् जिसका लगाव पूर्व और पर पद्यों से न हो तथा स्वतंत्र रूप से अर्थ-व्यक्तन तथा रसोद्वेक में समर्थ हो उसे मुक्तक कहते हैं।

हेमचन्द्राचार्य ने अनिबद्ध मुक्तकादि कहकर सभी स्फुट रचनाओं को मुक्तक के अंतर्गत बताया है। दण्डी और वामन ने मुक्तक का स्वतंत्र काव्यरूप न मानकर उसे प्रबन्ध काव्य का अंग माना है। दण्डी ने 'मुक्तक काव्य' नाम तो नहीं दिया पर उन्होंने सगबद्ध या प्रबन्ध काव्य के समस्त रूपों का एक प्रकार का तथा उनसे भिन्न निबन्ध रचनाओं को अर्थ प्रकार का बताया है। आचार्य विश्वनाथ ने साहित्य दर्पण में अनिबद्ध काव्य का मुक्तक माना है—

'छन्दोबद्धपद पद्य तेन मुक्तेन मुक्तकम्

उपयुक्त विवेचन से स्पष्ट है कि अपने में पूरा तथा अर्थ छन्द निरपेक्ष रचना को सभी आचार्यों ने मुक्तक कहा है। यह प्रबन्ध काव्य का अंग न होकर

स्वतंत्र काव्यरूप है, जिसकी अपनी विशेषता है। मुक्तक काव्य की तीन प्रमुख विशेषताएँ हैं—निबन्धता संक्षिप्तता और सरसता। मुक्तक में एक ही भाव स्थिति या विचार का गहरा वर्णन होता है जीवन का विस्तृत चित्रण नहीं। अतः मुक्तककार का रूप में वही कवि सफल हो सकता है जिसमें भावों को समेटने तथा सारत अभिव्यक्त करने की क्षमता का अद्भुत सम्बन्ध हो। आचार्य शुक्ल के शब्दों में 'इसके लिए कवि को मनोरम वस्तुओं और ध्यापारों का एक छोटा सा स्तम्भ कल्पित करना पड़ता है। अतः जिस कवि में कल्पना की समाहार शक्ति के साथ भाषा की समास शक्ति जितनी अधिक होगी उतना ही वह मुक्तक की रचना में सफल होगा।'

मुक्तक काव्यत्व की दृष्टि से प्रबन्ध की अपेक्षा विशिष्ट होते हैं। रसध्वनि की श्रेष्ठ काव्य मानने वाले आचार्य आनन्दवर्धन ने कहा है

‘अमरक नवरेक श्लोक प्रबन्धशतायत

अर्थात् अमरकशतक का एक एक श्लोक सैंकड़ों प्रबन्धों से अधिक रमणीय है क्योंकि उसके भीतर सरस प्रसंगों की योजना इस कौशल से की गई है कि श्लोक को पढ़ते ही पाठक भावमग्न हो जाता है। हिन्दी में सूरदास का सूरसागर तुलसीदास की कवितावली गीतावली आदि रचनाएँ तथा बिहारी सतसई आदि मुक्तक काव्य परम्परा के अनमोल रत्न हैं। मुक्तककार का कौशल अनावश्यक प्रयोगों के त्याग एवं सरस स्थितियों के चयन में निहित होता है। प्रबन्ध काव्य को विशिष्ट मानने वाले आचार्य शुक्ल ने मुक्तक को चुना हुआ गुलदस्ता बताकर प्रकारान्तर से उसके महत्त्व को स्वीकार किया है। पद्मसिंह शर्मा ने भी मुक्तक का मीठी रोटी के सदृश मधुर बताया है। वस्तुतः मुक्तक रस से परिपूर्ण ऐसी सम्पुटिका है जो भावों में के क्षणों में पाठकों को सहसा धमकृत कर उसके मन पर स्थायी प्रभाव छोड़ती है। डा. रामसागर त्रिपाठी लिखते हैं

मुक्तक का अर्थ होगा—ऐसा पद्य जो परत निरपेक्ष रहते हुए पूर्ण अर्थ की अभिव्यक्ति में समर्थ हो काव्य के लिए अपेक्षित चमत्कृति इत्यादि विशेषताओं से युक्त हो अपनी काव्यगत विशेषताओं के कारण जो मान्य देने में समर्थ हो जिसका गुम्फन अत्यन्त रमणीय हो और जिसका परिशीलन ब्रह्मानन्द सहाय चवणा के प्रभाव से हृदय की मुक्तावस्था प्रदान करने वाला हो' इस प्रकार मुक्तक शब्द की सार्वभौमिकता रूप की दृष्टि से निबन्ध होने व प्रभाव की दृष्टि हृदय को मुक्त दशा (आनन्दवस्था) में पहुँचाने में देखी जा सकती है। कवि कम की

दृष्टि से मुक्तक रचना प्रबन्ध की अपेक्षा दुष्कर होती है। इसके अनेक कारण हैं—एक बात तो यह है कि प्रबन्ध काव्य में पाठक का मन कथा निर्वाह की रचकता से बँधा रहता है। आग की घटना और परिस्थिति को जानने के लिए चित्त इतना उत्सुक रहता है कि बीच में जाये अनेक दोषों की ओर हमारा ध्यान ही नहीं जाता। अगर अनायास किसी दोष पर दृष्टि पड़ जाए तो हम कथा के परिणाम को जानने की आकुलता में तुरन्त आगे बढ़ जाते हैं। दूसरी बात यह है कि प्रबन्ध के पात्रों से हम इस कदर जुड़ जाते हैं कि उनके क्रियाकलापों में हम गहरी रुचि लेने लगते हैं। पात्रों के सम्बन्ध में हमारी एक धारणा बन जाती है और हम प्रबन्धगत अन्य दोषों का अनदेखा कर देते हैं। प्रबन्ध का अन्तगत कथा प्रवाह में प्रसंग से जुड़कर नीरस रचना भी सरस हो जाती है। एक उदाहरण में यह बात स्पष्ट की जा सकती है। तुलसी के रामचरितमानस के अनेक नीरस दोहे उनके मुक्तक-संग्रह दाहावली में दिए हुए हैं। एक दोहा देखिए

सरनागत कहँ जे तजहि निज अनहित अनुमानि ।

ने नर पामर पापमय तिनिहि बिलोकन हानि ।

दोहावली में यह दोहा एक सामान्य नीति कथन के रूप में आता है जिसका अर्थ शरण में आय हुए व्यक्ति को शरण न देने वाला पापी है और उसका मुँह भी नहीं देखना चाहिए। इस कथा में कोई रसात्मकता नहीं है। यह दोहा मात्र सूक्ति कहा जा सकता है। इसके विपरीत 'रामचरित मानस' में यह दोहा विभीषण की शरणागति के प्रसंग में उस समय कहा गया है जबकि राम के परामशदाता विभीषण का शत्रु पक्ष का बताकर उस शरण में न लेने की सलाह देते हैं। ऐसी स्थिति में यह दोहा पाठक के मन में राम की शरणागतवत्सलता का भाव जगाने में समर्थ होगा है। यह प्रबन्धगत परिस्थिति का प्रभाव है कि एक सामान्य सूक्ति भी भावव्यञ्जक हो जाती है।

मुक्तक के भेद

संस्कृत के आचार्यों ने मुक्तक के अनेक भेद किये हैं। दण्डी के अनुसार मुक्तक के मुख्य भेद तीन हैं—मुक्तक कुलकोश और सघात। जानद वघन के अनुसार मुक्तक सदानितक विशेषक कलापक, कुलक और पयायबन्ध—छह प्रकार के मुक्तक हैं। हेमचन्द्र ने मुक्तक काव्य के भेद इस प्रकार माने हैं—मुक्तक सदानितक, विशेषक कलापक कुलक कोश प्रघट्टक विकीर्णक और सघात। विश्वनाथ ने साहित्य दण्ण में मुक्तक काव्य के भेद इस प्रकार किये हैं—

- 1 मुक्तक—अथ की दृष्टि से अपने घ्राप में पूण एक श्लोक ।
- 2 युग्मक या सप्तानितक—दो श्लोकों में पूण अथ व्यक्त करन वाली रचना ।
- 3 विशेषक—यह रचना जिसका अथ (अथय) तीन श्लोकों में पूण हाता है ।
- 4 श्लोकक—चार श्लोकों वाली रचना है ।
- 5 कुलक—पाच श्लोकों वाली रचना । हेमचन्द्र ने इस भेद में श्लोक-संख्या पाच से बौद्ध तक मानी है ।
- 6 षोडश—इसमें मुक्तकों का समूह होता है । आचार्य हेमचन्द्र का मानना है कि किसी एक कवि या अनेक कवियों की सूक्तियों में सह की षोडश कहते हैं ।
- 7 प्रघट्टक—एक कवि के मुक्तक-संग्रहक प्रघट्टक का कहत है । जस गाथा सप्तशती विहारी सतसई आदि ।
- 8 विकीर्णक—अनेक कवियों के लिखे हुए मुक्तकों का संग्रह ।
- 9 सघात या पर्यायवध—एक कवि द्वारा एक विषय पर लिखे गये मुक्तकों को यह नाम दिया गया है ।

उक्त वर्गीकरण से स्पष्ट है कि वध की दृष्टि से मुक्तक काव्य का आकार केवल एक श्लोक तक सीमित नहीं था । विद्वानों ने श्लोक संख्या के सम्बन्ध में विभिन्न मत व्यक्त किये हैं पर इस बात में सभी एकमत हैं कि मुक्तक रचना अथ की दृष्टि से स्वयं में पूण होती है ।

डा. रामसागर त्रिपाठी ने विषय वस्तु की दृष्टि से मुक्तकों का चार भागों में विभक्त किया है—

1 रसात्मक मुक्तक—इनमें रसचवणा या भावव्यञ्जना कराने वाले सभी मुक्तक आ जाते हैं ।

2 धार्मिक मुक्तक—देवता विषयक रति से सम्बन्ध रखने वाले सभी मुक्तकों का इस वर्ग में समावेश हो जाता है ।

3 प्रशस्ति मुक्तक—राजाओं की दानवीरता को आधार बनाकर लिखे गये मुक्तक इसमें रखे जा सकते हैं ।

4 सूक्ति मुक्तक—ऐसे मुक्तकों में लोकनीति तथा चमत्कार आदि वण्य विषय होते हैं । इनमें भाव व्यञ्जना न होकर मात्र तथ्य कथन होता है जो उक्ति वैचल्य के कारण चमत्कारपूर्ण होता है ।

माध्यम की दृष्टि से भी मुक्तक काव्य के दो भेद किये जा सकते हैं—

1 पाठ्य मुक्तक—पाठ्य मुक्तक कवि की तरल अनुभूति को स्थापित करते हैं पर उनमें गेयता नहीं होती।

2 गीति मुक्तक—इन मुक्तक में कवि की तीव्र अनुभूति का आवगम संगीतात्मकता लेकर बाहर फूट पड़ता है।

संस्कृत काव्यशास्त्र में निरूपित मुक्तक काव्य के उपयुक्त भेदों को देखकर यह निष्कर्ष निकालना उचित होगा कि विषयवस्तु रूप सत्या आदि की दृष्टि से मुक्तक के अनेक भेद हो सकते हैं। हिन्दी में मुक्तक काव्य के जितने रूप मिलते हैं वे संस्कृत काव्यशास्त्र में परिगणित नहीं हैं और जिनका उल्लेख संस्कृत में है उनमें से अनेक हिन्दी में प्रचलित नहीं हैं। कारण स्पष्ट है प्रत्येक भाषा के साहित्य और काव्यरूपों के विकास का स्वतन्त्र इतिहास होता है। देश, काल के अनुसार साहित्य का विकास होता है अतः परिवर्तित परिस्थितियों के अनुसार साहित्य की विषयवस्तु व रूपमञ्जा में परिवर्तन होता है। फलतः पुराने मानदण्ड बदलते रहते हैं और नये साहित्य के आधार पर साहित्य के निकट बनते रहते हैं। हिन्दी ने एक ओर लोकभाषाओं में प्रचलित मुक्तक के काव्यरूपों को ग्रहण किया है तो दूसरी ओर विदेशी काव्यरूपों को अपने ढंग में आत्मसात् किया है। इस दृष्टि से डा. शम्भुनाथ सिंह ने हिन्दी साहित्य काण्ड, भाग-1 में हिन्दी मुक्तक का वर्गीकरण इस प्रकार किया है—

1 सख्याश्रित मुक्तक काव्य—सग्रह के पद्यों की सख्या के आधार पर यह विभाजन किया गया है। जैसे एक हजार मुक्तक का सग्रह हजार कहलाता है—इस निधि का रतन हजार। वही प्रकार अन्य सख्याश्रित मुक्तक के नाम गिनाये जा सकते हैं—नीतिशतक (भतहरि) शिवा वाकनी (भूषण) हनुमान चालीसा (तुलसीदास), देव पचीसी (देव) खटमल वाईसी (प्रोतम) आदि।

2 वणमालाश्रित मुक्तक काव्य—इसमें प्रत्येक पक्ति वणमाला के अक्षर क्रम से प्रारम्भ होती है। उदाहरणार्थ बकहरा (महाराज विश्वनाथ सिंह) अखरावट (जायसी)।

3 छंदाश्रित मुक्तक—बहुत लोकप्रिय छन्दों पर आश्रित मुक्तक इसमें सन्निविष्ट होते हैं। जैसे अपभ्रंश में 'पाहुड दोहा', हिन्दी में ढोला मारू या दूहा शृंगार सौरठा (रहीम) कवितावली (कवित्त छंद में लिखी तुलसीदास की रचना) आदि।

4 रागाश्रित मुक्तक—संगीतशास्त्र या लोकप्रचलित गीतों के प्रभाव में लिखी हुई रचनाएँ इसमें आती हैं। अपभ्रंश और हिन्दी के रासमञ्जक काव्यों

का प्रणयन रागाश्रित है। लावनी' राग म लिखे 'रहस लावनी (नवलसिंह), दधीमिह की लावनिया आदि काव्य इस कोटि के है।

5 ऋतु उत्सव आश्रित मुक्तक—ऐसे काव्यो म 'आदिनाथ फाग, 'नेमिनाथ फाग' होरी की भाव फाग बिहार (दानो नागरीदास रचित), आदि हैं।

6 पूजा धर्म-आश्रित मुक्तक—इसमे स्तोत्र साहित्य, साझी भजन आदि धार्मिक मुक्तक सन्निविष्ट हो जाते हैं। जैसे ऋषभजिन स्तुति (दवसेन), शिव स्तोत्र (गिरिधरदास), साझी (नागरीदास) आदि।

7 लोकाश्रित—मुक्करो, पहले, कहावत, ढवासला आदि मुक्तक इस वग मे आते हैं।

8 पारसी का-परूप—गजल, हवाइया चतुष्पदी आदि।

9 अंग्रेजी काव्यरूप—द्विपत्नी (कप्लेट) चतुदशपदी (सानेट), शोकगीति (एलेजी), गीति या प्रगीत मुक्तक (लिरिक)।

10 साहित्य शास्त्राश्रित—छन्द रस ध्वनि आदि के लक्षण और उदाहरण आदि के छन्द।

11 अथ फुटकर काव्यरूप—अष्टयाम द्रुतकाव्य, मक्षक काव्य आदि।

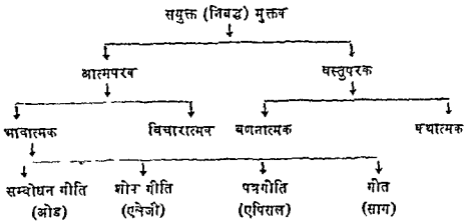
डा। निमलाजन ने मुक्तक काव्य के भेदापभेद इस प्रकार किए हैं जो हिंदी के सदाभ म उपयुक्त और सटीक हैं—

(1) स्फुट मुक्तक—संस्कृत काव्य शास्त्र म मुक्तक काव्य का जो लक्षण निर्धारित किया है उमके अतगत स्फुट मुक्तक रखे जा सकत है। ये पूर्वापर क्रम निरपक्ष स्वतंत्र अथ की अभिव्यक्ति मे समय तथा रसपूर्ण हात हैं। इसक उपभेद इस प्रकार हैं—

(क) आत्मपरक—(1) भावात्मक और (2) विचारात्मक।

(ख) वस्तुपरक—(1) वणनात्मक और (2) कथाश्रित।

(2) समुक्त मुक्तक—ऐसे मुक्तक स आशय अनक छन्दो मे विरचिन ऐसी रचना से है जिनमे प्रवच की भाति दूर तक कथा निबन्धन तो नहीं होता पर य छन्द भावाश्रित की दृष्टि से सापेक्ष होत हैं। डा निमला जन के शब्दो म 'यह विद्या मुक्तक इसलिए स्वीकार की जाती है कयाकि इसम कवि प्रवच की भाति किसी श्रमिक नहीं शणिक अनुभूति को व्यक्त करता है। समुक्त यह इसलिए है कि व्यक्त अनुभूति शणिक हात हुए भी एक स अधिक छन्दो म प्रकाहित रहती है। इसके उपभेद इस प्रकार हैं—



स्फुट मुक्तक तथा सयुक्त मुक्तक के उपयुक्त उपभेदा में हिन्दी में प्रयुक्त प्रायः सभी मुक्तक काव्य रूपों का समावेश हो जाता है। उर्दू फारसी के प्रभाव से गृहीत मुक्तक को भी इसमें सम्मिलित किया जा सकता है।

मुक्तक-काव्य का विकास

रसात्मक मुक्तक परम्परा को निम्नलिखित काल खण्डों में विभाजित किया जा सकता है—

1 प्राकृति काल—इसे प्रारम्भिक काल या हाल (गाथा सतसई के रचयिता) से पूर्ववर्ती काल कहा जा सकता है। इस काल की रचनाओं में प्रकृति वणन की प्रधानता है अतः इसे प्रकृति-काल नाम दिया गया है। इसमें वैदिक काल तथा बौद्ध-जैन काल की रचनाएँ आती हैं।

मुक्तक रचना की परम्परा का प्रारम्भ ऋग्वेद से होता है। जाज प्रियसन की मायता है कि 'मुक्तक काव्य धारा का गामुख निश्चय ही ऋग्वेद है। ऋग्वेद मूलतः यनपरक रचनाओं का सफलन है, पर कलात्मक और रसात्मक मुक्तकों का भण्डार भी है। उसमें प्रकृति सौन्दर्य के मरस चित्र राशि राशि विचारे मिलते हैं। सूर्य चन्द्रमा, मधु विद्युत् व्योम नक्षत्र उषा रात्रि आदि व दृश्या का मनोहारी वणन ऋग्वेद को काव्यमय बना देता है। प्रकृति चित्रण का सर्वोत्तम उदाहरण ऋग्वेद का उपस सूक्त है। वैसे तो जातीय सधष का चित्रण हाने के कारण वेद में वीर रस की प्रधानता है, पर उसमें शृंगार हास्य करुण, और

ज्ञान रम भी मिलते हैं। बलात्मक मुक्तक व अतिरिक्त श्रृंगेद व धार्मिक एवं नीति सम्बन्धी मुक्तक भी प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होते हैं।

‘धेरी गाथा — ऋग्वेद के बाद इस काल की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण भावात्मक रचना है। इसमें बौद्ध स्यासिया के जीवन का उपदेशात्मक चित्र मिलता है। नाग्यो द्वारा रचित होने से इनमें भावना की प्रधानता है। इनमें जीवन के विविध अनुभवों का भावपूर्ण वर्णन है।

‘धेर गाथा’—मुक्तक काव्य परम्परा की अगली बड़ी है। ये गाथाएँ धेरी ने कही हैं। धेर बौद्ध सभ में प्रवेश करने से पूर्व गृहस्थ थे। ये गाथाएँ 264 धेरी की कही हुई हैं जो 1279 पद्यांशों में निबद्ध हैं। इन गाथाओं में नतिक उपदेश तथा प्रकृति प्रेम का चित्रण हुआ है। विण्टरनिज ने लिखा है इन धार्मिक कविताओं में प्रकृति के मनमोहक चित्र भारतीय मुक्तक परम्परा के बहुमूल्य रत्न हैं।

जैन साहित्य के अतगत नादी और अनुदार योग नामक दो महान् ग्रन्थ मिलते हैं। इनमें जैन धर्म सम्बन्धी वाता के साथ काव्य रस पर विस्तार से लिखा गया है और शृंगार रस सम्बन्धी पद्य उदाहरण के रूप में दिए गए हैं।

2 प्राकृत काल—मुक्तक काव्य परम्परा का दूसरा चरण ईसा की प्रथम शताब्दी से प्रारम्भ होकर जयदेव (12वीं शती) तक चलता है। महाकवि हाल की गाथा सतसई इस काल की प्रथम और उत्कृष्ट रचना है। इस काल में लोक जीवन से सम्बद्ध प्राकृत भाषा की रचनाओं का बाहुल्य था, अतः इस काल को यह नाम दिया गया है। इस की रचनाओं में श्रुतु सहार (कालिदास) अमर शतक अमरक) चौरपचागिवा (विल्हण) उल्लेनीय हैं। विषयवस्तु की दृष्टि से इस काल की रचनाओं को दो भागों में बाटा जा सकता है—प्रकृति काव्य और नर काव्य। इन दोनों में प्रमुखता नर-काव्य की कही जिसके अतगत कवियों ने नारी-सौन्दर्य के चित्रण पर ही अपनी दृष्टि केन्द्रित की।

इस काल में सग्रह ग्रन्थ भी लिखे गये हैं जिनमें सुभाषित रत्नभाण्डागार विशेष प्रसिद्ध है। इन सग्रह ग्रन्थों में अनेक कवियों की कृतियों का उल्लेख मिलता है। कुछ कवियों ने मेघदूत की पक्तियों को लेकर समस्यापूर्ति के रूप में काव्य लिखे जिनमें शीलदूत, नेमिदूत, पार्ष्वाभ्युत्थ सन्देश रासक उल्लेखनीय हैं।

इस काल में प्राकृत और अपभ्रंश भाषाओं में मुक्तक लिखे गये पर इन दोनों भाषाओं के मुक्तक की क्रमबद्ध परम्परा नहीं मिलती। अपभ्रंश में जैन कवि जयवल्लभ वृत्त वज्रलगा एक प्रसिद्ध रचना उपलब्ध है जिसका काल

निश्चित नहीं है। इसमें प्रेम सम्बन्धी पद्यों की बहुलता है। अपभ्रंश के रसात्मक मुक्तका का सर्वजन हेमचन्द्र वृत्त प्राकृत व्याकरण में उदाहरणों के रूप में देखा जा सकता है। इन उदाहरणों में शृंगार रस के उत्कृष्ट पद्य मिलते हैं।

3 मध्यकाल—मुक्तक काव्य परम्परा के तृतीय चरण में हिन्दी साहित्य के इतिहास के भक्तिकाल तथा रीतिकाल की रसात्मक रचनाएँ समाविष्ट हो जाती हैं। इस काल की प्रमुख रचनाएँ हैं—गीत गोविन्द (जयदेव) विद्यापति की पदावली सूरसार (सूरदास) तथा रसखान की मुजान रसखान, प्रेम वाटिका आदि हैं। प्रमुख मुक्तककार हैं—अष्टछाप के कृष्णभक्त कवि, मीरा, तुलसीदास, पद्माकर, सुन्दरदास गग रहीम सेनापति आदि। उल्लेखनीय है कि रीतिकाल में मुक्तक-नाथ्य कलात्मक दृष्टि से उत्कर्ष पर पहुँच गया था।

4 आधुनिक काल—इस काल खण्ड में हिन्दी साहित्य के इतिहास के आधुनिक काल में लिखे गए मुक्तक काव्य के विकास का विवेचन अपेक्षित है। आधुनिक काल में मुक्तक परम्परा रीतिकाल से होती हुई भारत-दु काल तथा द्विवेदी युग तक चली आई। भारत-दु काल में मुक्तक परम्परा का विकास नहीं हो पाया। विवेच्यकाल में इसका प्रारम्भ द्विवेदी युग से होता है। द्विवेदी युग में वणन प्रधान मुक्तक अधिक लिखे गये। इन मुक्तकों में इतिवृत्तात्मकता मिलती है। राम देवीप्रसाद ने 'नवल नागरी सुनगरी वणन तथा अलका वणन, इसी प्रकार क मुक्तक लिखे। कवि शंकर ने भारतोदय में देश सुधार सम्बन्धी पद्यपद्या लिखी। नखशिख वणन की चमत्कारपूर्ण शैली में रायकृष्ण दास ने कुछ दोहे लिखे। वणनात्मक मुक्तका में प्रकृति वणन और मानवरूप का वणन हुआ है।

आगे चलकर छायावाद के प्रवर्तन के साथ मुक्तक की विषयवस्तु और शैली दोनों में ही क्रांतिकारी परिवर्तन आया। विषयवस्तु की दृष्टि से ये रचनाएँ वस्तुप्रधान के स्थान पर हो गयीं तथा स्फुट मुक्तक के स्थान पर संयुक्त मुक्तकों का प्रचलन हुआ। अपवादरूप में कुछ स्फुट मुक्तक भी लिखे गये लेकिन इनकी संख्या बहुत कम है। इन मुक्तकों में प्रगीत रचना के तत्त्व अधिक मिलते हैं। निराला तथा अय छायावादी कवियों ने संयुक्त मुक्तकों की रचना की। बच्चन ने हलाहल, मधुशाला आदि चतुष्पद्या लिखकर भावनाओं की अभिव्यक्ति के लिए मुक्तकों का सहारा लिया।

प्रगतिवादी कवियों ने वैयक्तिक भावना के स्थान पर सामाजिक चेतना को आधार बनाकर मुक्तक लिखे। नरेन्द्र शर्मा ने भी मुक्तका की परम्परा को आगे बढ़ाया।

प्रयोगवाद के कवि जीवन के यथार्थ का चित्रण वैयक्तिक भावनाओं के आधार पर करने लगे। इन कवियों ने वस्तु की आन्तरिक अथर्व्यजना का भावना का रंग चढाये बिना व्यक्त करना प्रारम्भ किया। नये कवियों ने भी समुक्त मुक्तक रचनाएँ लिखी। इन कवियों पर उद्ग एव अंग्रेजी मुक्तक शैली का प्रभाव भी दिखाई देता है। आधुनिक काव्य में महापुरुषों के स्तवन और प्रशस्तिगान के रूप में भी कविताएँ लिखी गई।

इस काल में अंग्रेजी शैली के मुक्तक में सर्वोच्च गीत, शोकगीत, गीत, चतुष्पदी विशेष रूप में लोकप्रिय हुए। उद्ग शैली के अतगत गजल, हजादया आदि हिन्दी में भी प्रचलित हुईं। □

संकलित मुक्तककार

1 योगीन्दुदेव (छठी सातवीं शताब्दी)

योगीन्दुदेव अपभ्रंश साहित्य के सत्रसे प्राचीन कवि है। डा ए एन उपाध्य न इनका समय छठी सातवीं शताब्दी के बीच माना है। इनके रचे हुए 'परमात्म प्रकाश तथा योगसार आध्यात्मिक काव्य हैं। इन दोनों कृतियों की रचना तत्कालीन लोकभाषा अपभ्रंश में हुई है। 'परमात्म प्रकाश' में दो अधिकार (अध्याय) हैं। प्रथम अधिकार में 123 दोहे तथा द्वितीय में 214 दोहे संग्रहित हैं। प्रथम अधिकार में आत्मा के स्वरूप जीव द्रव्य एवं जगत् का तात्विक विवेचन है। दूसरे अधिकार में मोक्ष का स्वरूप, मोक्ष प्राप्ति के साधन, मोक्ष का फल, समाधि आदि विषयों पर विचार किया गया है। योगसार में 108 दोहे हैं। इसमें आत्मतत्त्व पर प्रकाश डालते हुए अत्रय पदार्थों से उसकी भिन्नता प्रतिपादित की गई है।

संकलित मुक्तक में से प्रारम्भ के 21 'परमात्म प्रकाश' तथा श्लोक 5 योगसार से उद्धृत किये गये हैं। वर्तमान में योगीन्दुदेव के इन दोहों के अध्ययन की उपयोगिता दो दृष्टियों से देखी जा सकती है। प्रथम, भाषा की दृष्टि में अपभ्रंश हिन्दी तथा प्राचीन भाषाओं के बीच की एक महत्त्वपूर्ण कड़ी है। संस्कृत पानि तथा प्राङ्ग भाषाओं के शब्द अपभ्रंश से हिन्दी में आए हैं। आधुनिक हिन्दी के अनेक शब्दों की व्युत्पत्ति का अध्ययन में अपभ्रंश भाषा और साहित्य के अध्ययन का महत्त्व असंदिग्ध है। दूसरे ये रचनाएँ आज उच्च जीवन मूल्यों की चेतना से दूर होत हुए समाज की प्रगति की नई दिशा देकर उसे भटकाव में बचाने में सहायक हो सकती हैं। मालिक दृष्टि से चाहे हम किना ही विकास करें अन्तःकरण की शुद्धि के बिना समाज में शांति की स्थापना नहीं हो सकती। आज का मनुष्य मानसिक तनाव की यातनाओं में गुजर रहा है। असुरक्षा, अलगाव, सत्रास, अविश्वास आदि ने सम्पूर्ण विश्व में मनुष्य के अस्तित्व के लिए गहरा मकट उपस्थित कर दिया है। आध्यात्मिक साहित्य इन सब से त्राण दिला कर सुख और शांति की राह दिखा सकता है।

इस संकलन में योगी-दुदेव के 'परमात्म प्रकाश' तथा 'योगसार' से 26 दोहे लिए गए हैं जो तत्त्व चिन्तन से सम्बन्धित होने के कारण विचार प्रधान हैं। इनमें आत्मा और अनात्म पदार्थों का पहचानने के लिए सम्यक् दृष्टि विकसित करने की आवश्यकता बताई गई है। ईश्वर किसी पूजा स्थान में रहकर प्राणिमात्र के चित्त में निवास करता है जिसे समत्व भावना से प्राप्त किया जा सकता है। राग द्वेष आदि कपायो से मुक्त होने पर मोक्ष अर्थात् परमानन्द की प्राप्ति हास्यती है। पारिवारिक सामाजिक कर्तव्या का निर्वाह करते हुए व्यक्ति ज्ञान साधना द्वारा आनन्दपूर्ण जीवन जी सकता है। इस रूप में ये दाह आचरण की शुद्धता द्वारा सामाजिक जीवन को समुन्नत करने का संदेश देते हैं। विचारों की प्रधानता से इन दोहों में अनुभूति—(भाव पक्ष) नगण्य है। शली उपदेशात्मक है। अप्रस्तुत विधान की दृष्टि से उपमा रूपक आदि अलंकारों का सुन्दर प्रयोग किया गया है।

2 तुलसीदास

(1532-1623 ई०)

तुलसीदास रामभक्ति धारा के प्रमुख कवि हैं। इनके लिखे हुए ग्रन्थ—राम चरित मानस गीतावली, विनयपत्रिका जानकी मंगल, पावती मंगल, रामलला नहछू दोहावली, कवितावली, रामाना, बराय्य सदीपनी, कृष्णगीतावली तथा बरवै रामायण हैं।

इन सभी रचनाओं में विविध भावों का सुन्दर बणन हुआ है। रामकथा के विविध प्रसंगों द्वारा तुलसीदास ने विखरते हुए हिन्दू समाज के समस्त आदर्श प्रस्तुत किए हैं जो उन्हें लोकनायक के रूप में प्रतिष्ठित करते हैं। उनके आराध्य सगुण साकार अवतारी पुरुष राम हैं, जो प्राणिमात्र के हृदय में ही नहीं ससार के बण-बण में ध्यात हैं। समस्त सृष्टि में परमात्मा के स्वरूप का साक्षात्कार करने की भावना के कारण उनकी भक्ति एकांत और लोकबाह्य न होकर सामाजिक चेतना से अनुप्राणित है। तुलसी का वाक्य समवय का अनूठा उदाहरण है। डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी ने शब्दा में "उनमें केवल लाल और शान्ति का ही समवय नहीं है—गाहंस्थ्य और वैराग्य का भक्ति और ज्ञान का, भाषा और संस्कृति का निगुण और सगुण का पुराण और वाक्य का भावावेश और अनासक्त चिन्तन का समवय रामचरितमानस के आदि से अज तक का धारा पर जानेवाली

परा कोटियो को मिलाने का प्रयत्न है। भावों की विविधता के साथ शैली की विविधता भी गास्वामीजी की विशेषता है। उनके काव्य में छप्पय पद्धति, गीति-पद्धति कवित्त सधया पद्धति सूक्ति-पद्धति, प्रबन्ध पद्धति आदि काव्यशैलियों का सकल प्रयोग हुआ है।

सकलित मुक्तक 'गीतावली' 'वैराग्य सदीपनी' 'जानकी मंगल', कवितावली 'वरव रामायण' तथा 'दोहावली' से उद्धृत किए गए हैं। 'गीतावली' के मुक्तक भावव्यजना तथा गयात्मकता की दृष्टि से उत्कृष्ट हैं। रामकथा के प्रसंगों में सम्बन्धित ये मुक्तक जीवन की विविध भावदशाओं का मनोहर चित्र प्रस्तुत करते हैं। 'वैराग्य सदीपनी' के दाह सन्त स्वभाव तथा सत महिमा के वर्णन में सम्बन्धित हैं जो नैतिकता तथा शांति के दृष्टि से पठनीय हैं। 'जानकी मंगल' में से धनुर्भंग प्रसंग के सरस मुक्तक का सकलन किया गया है, जिनमें जनक, सीता राम तथा अन्य राजाओं की मन स्थिति की व्यजना हुई है।

कवितावली कवित्त छन्द में लिखी सरस मुक्तक रचना है। यहाँ 'राम वन गमन' के उस ममस्पर्शी स्थल को लिया गया है जिसमें ग्रामवासी राम सीता और लक्ष्मण को वन माग में जात हुए देखकर अपनी भोनीभाली प्रतिप्रियायें व्यक्त करते हैं। 'वरव रामायण' से नाम महिमा का उजागर करने वाले कुछ रोहे मकलित हैं। 'दोहावली' सरस मुक्तक का सकलन नहीं है सूक्ति भण्डार है। तुलसीदास ने इसमें लोकनीति एवं लोकव्यवहार से सम्बन्धित विषयों पर मुक्तक लिखे हैं।

3 रसखान

(1555-1618 ई०)

हिंदी कृष्ण नाय धारा में रसखान का योगदान महत्त्वपूर्ण है। उनका काव्य धर्म और सम्प्रदाय की सीमा से परे होने के कारण भारतीय सस्कृति की भावना का सच्चा प्रतिनिधित्व करता है। मुसलमान होते हुए उन्होंने कृष्ण के प्रति अनन्य अनुराग व्यक्त किया है जो धार्मिक समन्वय का उदाहरण है।

रसखान की रचनाएँ हैं—सुजान रसखान दानलीला प्रेमवाटिका तथा स्फुट पद। ये सभी रचनाएँ मुक्तक काव्य रूप हैं।

इस मञ्चन में प्रथम तीन रचनाओं से सामग्री संप्रहीत की गयी है। 'सुजान रसखान' का मुख्य विषय कृष्ण लीला का वर्णन है, जो स्फुट मुक्तया में प्रमिश्यक्त हुआ है। कृष्ण लीला के अतगत प्रेम, भक्ति, गौचरण रसलीला, दधिदान उपालम्भ मयोग वियोग, कृष्ण सीदय उद्वेग उपदेश आदि प्रसंगों का वर्णन है। दानलीला एक लघु रचना है, जिसमें 11 वक्त्र सबैवा मप्रहीत हैं।

यह रचना मयुक्त मुक्तय के अतगत रखी जा सकती है। इसकी प्रामाणिकता के सम्यघ म कुछ विद्वानों का सदेह है पर रीतिवाल के विशेषण डा विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने इसे प्रामाणिक मानकर 'रमगान प्रयावली में संप्रहीत किया है। दानलीला में गोपी कृष्ण या राधा कृष्ण के हासपरिहास का वर्णन है। रसखान के मुक्तय काय का तीसरा सबलन प्रेम वाटिका' है जिसमें 53 दोहे हैं। इसमें विशुद्ध प्रेम का निरूपण है। 'प्रेम वाटिका में प्रेम का स्वरूप, प्रेम की महिमा प्रेम पय की कठिनता आदि बताते हुए प्रेम को ईश्वर का प्रतिरूप बताया गया है।

4 सुन्दरदास (1596-1689 ई०)

निगुण काव्य धारा के अतगत दादूदयाल के शिष्य सत सुन्दरदास बड़े प्रतिभाशाली कवि थे।

उन्होंने 42 प्रयोगों की रचना की जिनमें पान ममुद्र और सुन्दर विलास विशेष उल्लेखनीय हैं। उनके काय में भक्ति योग और नीति सम्बन्धी विषयों को स्थान मिला है। य शृंगार रस की रचनाओं के कट्टर विरोधी थे। उन्होंने परिष्कृत ब्रज भाषा का प्रयोग किया है।

सबलित अश म गुरु महिमा उपदेश बाल की विकरालता देह एव जगत् नश्वरता आशा तृष्णा आश्वासन, विश्वास देह की मलिनता, मूखता बाणों का महत्त्व व भजन न करने वाले, विषयों से सम्बन्धित मुक्तकों को स्थान दिया गया है।

5 पद्माकर (1753-1833 ई०)

पद्माकर भट्ट रीतिकाल के अंतिम चरण के यशस्वी कलाकार थे । अपने जीवन काल में उन्हें स्तर का सम्मान प्राप्त था । देहावसान के उपरांत तो उनका नाम और चमक उठा ।

रचनाएँ—पद्माकर की रचनाओं में 1 हिम्मत बहादुर विन्दावली 2 जगद् विनोद 3 पद्माभरण, 4 रामरसायन (दोह चौपाई में लिखित रामचरित) 5 प्रवाध पचासा एव 6 गगलहरी आदि प्रसिद्ध हैं ।

काव्य सौष्ठव—मतिराम के रसरज के समान पद्माकर ने जगद् विनोद ग्रंथ लिखा । यह नायिका भेद का उत्कृष्ट उदाहरण ग्रंथ है । 'ललित ललाम के समान पद्माभरण' नामक अलंकार ग्रंथ भी लिखा । पद्माकर ने वीररस का फडकता हुआ ग्रंथ हिम्मत विरदावली लिखा है । भूषण की टक्कर का वीररस का प्रवाह यहाँ भी दृष्टिगत होता है । शृंगार रस के पदा में पद्माकर की मधुर कल्पना और हाव भावपूर्ण मूर्तिविधान पाठकों को प्रत्यक्ष अनुभूति कराने में समर्थ हैं । कल्पना और वाणी के साथ भावुकता का संयोग पद्माकर के काव्य में बहुधा मिलता है । उदयपुर के महाराणा भीमसिंह के दरबार में रहते हुए पद्माकर ने 'गनगौर के मेले का ऐसा हृदयहारी वणन किया है जो अन्य कोई कवि आज तक नहीं कर पाया है ।

व्रजभाषा पर भी पद्माकर का असाधारण अधिकार था । अभिधा, लक्षणा एव व्यञ्जना शक्ति के प्रयोग में भी इस कवि का समान कौशल दिखाई पड़ता है । कहीं तो इनकी भाषा स्निग्ध मधुर पदावली द्वारा एक सजीव भावमयी प्रेम-मूर्ति प्रस्तुत करती है और कहीं भाव या रस की धारा बहाती है, कहीं अनुप्रासों की झंकार है तो कहीं वीररस भरी हुंकार है । इनकी भाषा में विषयानुकूल विविधता है परंतु सबत्र सजीवता का गुण परिलक्षित होता है ।

पद्माकर कवि अनुप्रास प्रिय लगते हैं । वणनात्मक पदा में अनुप्रास का प्रयोग शृंखलाबद्ध रूप में दिखाई देता है । ऊहात्मकता का रूप कहीं भी नहीं मिलता है । सबत्र हृदय की स्वाभाविकता प्रेरणा एव निष्कपटता मिलती है । विध्वंस-विधान की दृष्टि से भी पद्माकर का सफल कवि माना जा सकता है ।

दक्षिण भारतीय पद्माकर ने जिस निष्ठा एव विश्वास से हिंदी काव्य को गौरवाचित किया है वह आज के दक्षिण भारतीय हिंदी एव हिंदी इतर लेखकों

के लिए प्रेरणाप्रद हो सकता है। आज दक्षिण भारत के लोगों का पद्यावर का कवि रूप देखना चाहिए कि हिंदी काव्य परम्परा सारे देश के लोगों की सम्पत्ति है। उसमें प्रदेश एवं जाति भेद के लिए कोई श्रवण नहीं है।

सकलित जश में पद्यावर के भक्ति, वीररस तथा गंगा-स्तवन सम्बन्धी पद्यों को लिया गया है।

6 सूर्यमल्ल मिश्रण (1815-1868 ई०)

राजस्थानी भाषा में वीररस के अप्रतिम गायक सूर्यमल्ल मिश्रण का काव्य गुणात्मक एवं विशिष्ट है।

सूर्यमल्ल मिश्रण ने निम्नलिखित ग्रंथों की रचना की—वशभास्कर, वीर सतसई भगवतविलास, रामरजार, छ-दोमयूख सती रासो फुटकल कवित, मवेये आदि तथा घातु रूपावली। इनमें वश भास्कर एक विशालकाय ग्रंथ है जिसमें इतिहास और काव्य का संगम हुआ है। इसमें मृद्यतया बूँदी राज्य के इतिहास का वर्णन है साथ ही उसमें अनेक विषयों का समावेश भी हो गया है। यह ग्रंथ अत्यन्त गूढ और विचित्र है जिसका कारण विविध भाषाओं के अप्रचलित शब्दों का प्रयोग तथा कवि की पाण्डित्य प्रदर्शन की प्रवृत्ति है।

विश्वर सूर्यमल्ल मिश्रण की अक्षय कीर्ति का आधार वीर सतसई है जिसके कुछ दाँहे यहाँ सकलित हैं। वीर सतसई के प्रमुख विषय हैं—धरती प्रेम, प्रतिशोध की भावना मरणपत्र तथा राजस्थान में प्रचलित विभिन्न रीति रिवाज। इस काव्य में धरती के प्रति प्रेम की भावना का विशद चित्रण किया है। जो व्यक्ति धरती को छीनने का प्रयास करता है उसके प्रति प्रतिशोध की भावना स्थान स्थान पर व्यक्त की गई है। य भावना राजपूतों के जातिगत स्वाभिमान से भी जुड़ी हुई है। स्वामिभक्ति राजपूतों के चरित्र की ऐसी विशेषता है जो उनमें अनुशासन की भावना भर देती है। कवि न वीर सतसई में इस भावना का स्वाभाविक चित्रण किया है। राजस्थान के वीरों की महिमा तथा वायरा की निंदा कवि ने खुलकर की है। राजस्थान के वीरों की महिमा तथा वायरा की निंदा कवि ने खुलकर की है। राजस्थान के वीरों की महिमा तथा वायरा की निंदा कवि ने खुलकर की है। राजस्थान के वीरों की महिमा तथा वायरा की निंदा कवि ने खुलकर की है।

राजस्थानी वीर मरणपत्र की सजा देते थे। इससे उनकी देशभक्ति तथा त्याग का परिचय मिलता है। सतसई में कवि ने राजस्थान के रीति रिवाज का वर्णन कर राजस्थान के परम्परागत परिवेश को उजागर किया है।

वीर सतसई' वीररस का काव्य है जिसमें ओजगुण की प्रमुखता होती है। कवि ने वीररस के अनुकूल ओजरूप के अनुरूप भाषा का प्रयोग किया है। कवि म भाषा की समाहार शक्ति विलक्षण है। वह छोटे से दोहे में गम्भीर भावों को भरकर सामासिक शैली में अभिव्यक्त कर देता है। इस रचना में शैली की विविधता के कारण रोचकता निरन्तर बनी रहती है। कहीं सम्बोधन शैली है तो वही सम्वाद शैली, तो कहीं उद्बोधन शैली। सतसई की भाषा उत्तरकालीन राजस्थानी है।

7 शमशेर बहादुर सिंह

(जन्म 1911 ई०)

हिंदी के नये कवियों में शमशेर बहादुर सिंह की कविता खास ग्रहणियत रखती है।

शमशेर की कृतियाँ इस प्रकार हैं— दूसरा सप्तक के सात कवियों में से एक, कुछ कविताएँ 1959 में कुछ और कविताएँ, 1961 में, चुका भी हूँ नहीं मैं 'उदित 1980 (इसमें कवि की प्रारम्भिक कविताएँ हैं। इस रूप में प्रथम संकलन), 'इतने पास अपने, 1980 बात बोलेंगी, 1981।

शमशेर सच्ची संवेदनाओं को बिम्बों के माध्यम से अभिव्यक्त करने की क्षमता में बेजोड़ हैं। उनकी कविताएँ संवेदनात्मक बिम्बों के सीधे चित्र प्रस्तुत करती हैं। लगता है कि कोई कवि चित्रकार अपने चित्रों में शब्दों की तुलिका से रग भर रहा है। उनकी कविताएँ चित्र और कविता की मिली जुली स्थितियों का दस्तावेज हैं। शमशेर सीधे और सपाट चित्रों की अपेक्षा जीवन की विमर्शिता या द्वन्द्वमयी स्थितियों के कवि बनकर आते हैं। इस दृष्टि से 'एक आदमी दो पहाड़ों को कुहनियों से ठेलता और घिर गया है समय का रथ जसी कविताएँ उदाहरण के रूप में ली जा सकती हैं।

शमशेर में भावसंवादी चिंतन परम्परा का प्रभाव भी परिलक्षित होता है किन्तु उनका भावसंवाद कीरा चिंतन नहीं है। शमशेर में व्यक्ति और समाज का

लेकर सघष छिड़ा रहता है। वे व्यक्ति और समाज के बीच रास्ता खोजने हुए मानवतावादी बन जाते हैं।

समाजवादी संवेदनाओं के साथ-साथ शमशेर में रोमान्टिक संवेदनाएँ भी मिलती हैं। उनकी कविता में सौन्दर्य की व्यास प्रणयी की आकांक्षाएँ, प्रेमजनित आकांक्षा और निराशा से उपजी पीड़ाएँ आदि के चित्र मिलते हैं। प्रणय के प्रसंग में प्राकृतिक दृश्यों की रमणीयता के चित्र भी खींचे गये हैं। प्रेम की विभिन्न स्थितियों का चित्रण करने वाली कविताओं में बिम्ब योजना कुछ बिखर गई है किन्तु भावों की दृष्टि से अविचलित बनी रहती है। संक्षेप में कहा जा सकता है कि शमशेर मूलरूप से प्रणय जीवन के प्रसंगों के कवि हैं। उनकी संवेदनाओं की एकदम बड़ी मजबूत है। भाषा बड़ी सशक्त और तीखी है तथा अप्रस्तुत विधान के अतगत उपमाएँ जीवन से जुड़ी हुई हैं।

8 दुष्यन्त कुमार

हिन्दी में उर्दू की गजल शैली को लोकप्रिय बनाने का श्रेय दुष्यन्त कुमार का है। दुष्यन्त कुमार एक आस्थावादी सघष, अनिश्चय, पीड़ा आदि उपस्थित होना विभाविक है। सघष जीवन की अत्रिवायता है किन्तु जीवन के प्रति आस्था और विश्वास लेकर आगे बढ़ा जा सकता है। आस्था वह सबल है जो व्यक्ति को सघषों में टूटने नहीं देता और उसके भीतर दृढ़ आत्मविश्वास बना रहता है। जीवन के प्रति इस दृष्टिकोण ने उनके काव्य में आशा का संदेश भर दिया है। उनकी मान्यता है कि सूर्योदय से पहले अंधकार होता ही है— 'मगर इससे भयभीत होने की जरूरत नहीं दिन निकलने से पहले ऐसा हुआ ही करता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि दुष्यन्त कुमार की मूलचेतना आस्था वाली है।

सन् 1933 में जन्मा यह प्रतिभा पुत्र यदि कुछ वर्ष और रह गया होता तो हिन्दी साहित्य को अधिक समृद्ध करता।

नई कविताओं के अध्ये कवियों में दुष्यन्त कुमार की गिनती की जाती है। उनके काव्य में अनुभूति की तीव्रता और अभिव्यक्ति की सुस्पष्टता समान रूप से मिलती है। उनकी गजलों का एकमात्र संकलन 'साथे में धूप' प्रकाशित हुआ है।

इनकी प्रकाशित कृतियाँ हैं—सूय का स्वागत (कविता), आवाजा के घेरे (कविता) जलते हुए वन का वसन्त (कविता), एक बण्ड विपपायी (काव्य नाटक), छोटे छोटे सबाल (उपन्यास), आगन में एक वृक्ष (उपन्यास), मन के कोण (एकांकी) और मसीहा मर गया (नाटक), कुछ आलोचनात्मक पुस्तकें ।

विपम परिस्थितियों में रहते हुए भी मौज मस्ती और आनन्द उल्लास के साथ जीवन व्यतीत करना दुष्कृत कविता का एक अर्थ प्रतिपाद्य है । वे निराशा और मायूसी से थककर बैठ जाने में विश्वास नहीं करते । पराजय के कारण उनमें सकोच और निराशा के भाव उत्पन्न नहीं होते । वे एक सवत्पशील की तरह कमक्षेत्र में निरन्तर प्रियाशील रहते हैं । □

योगीन्दुदेव

देह विभिण्णउ णाणमउ जो परमप्पु णिएइ ।
 परम-समाहि-परिट्ठियउ पडिउ सो जि हवेइ ॥1॥
 जासुण षोठुण मोहु मउ जासु ण माय न माणु ।
 जासु न ठाणु ण माणु जिय सा जि निरअणु जाणु ॥2॥
 देहे वसतु वि णवि छिवइ णियमे देहु जो जि ।
 देह छिप्पई जो वि णवि मुणि परमप्पउ सो जि ॥3॥
 जो सम-भाव परिट्ठियहे जोइहँ कोई फुरेइ ।
 परमाडु जणन्तु फुहु सो परमप्पु हवेइ ॥4॥
 अत्थि न पुण्णु ण पाउ जसु अत्थिन हरिसु विसाउ ।
 अत्थि न एककु वि दोसु जसु सो नि णिरअणु साउ ॥5॥
 जीवा जीव म एककु करि लक्खण भेरें भेउ ।
 जो परु सो परु भणमि मुणि अप्पा अप्पु अभेउ ॥6॥
 देहहँ पेविखवि जर मरणु मा भउ जीव करेहि ।
 जो अजरामरु वभु परु सो अप्पाणु मुणेहि ॥7॥
 अप्पु अप्पि मुणत्तु जिउ सम्मा दिट्ठि हवेइ ।
 सम्मा इट्ठिउ जीवडेउ लहु वम्मइँ मुच्चेई ॥8॥
 हउँ गोरउ हउँ सामलउ हउँ जि विभिण्ण उवण्णु ।
 हउँ तणु-अगउँ धूलु हउँ एहउँ मूढउ मण्णु ॥9॥
 काल लहेविणु जोइया जिमु जिमु भोहु गलेइ ।
 तिमु तिमु दसणु लहइ जिउ णियम अप्पु मुणेइ ॥10॥
 अप्पा णिय मणि णिम्मलउ णियमे वसइ ण जासु ।
 सत्थ पुराणइँ तव चरणु मुक्खु वि करहिँ वि तासु ॥11॥
 गरें रणिए हिमवउए दउ ण भीसइ सतु ।
 दप्पणि भइलए विवु जिम एहउ जाणि तिभतु ॥12॥

देउ ण देउले णवि सिलए णवि लिप्पइ जवि चित्ति ।
 अखउ णिरजणु णाणमउ सिउ सठिउ मम चित्ति ॥13॥
 जाणवि मण्णवि अप्पु परु जो पर-भाउ चएइ ।
 सो णिवु सुद्धउ भावउउ णाणिहिं चरणु ह्वेइ ॥14॥
 जावइ णाणिउ उपसमइ तामइ सजदु होइ ।
 होइ कसायहँ वसि गयउ जीव असजदु सो ॥15॥
 णाण विहीणहँ भोक्ख पउ ओष म कासु विजोइ ।
 वट्टएँ सलिल विरोलियइं करु षोप्पउउ ण होइ ॥16॥
 भुजतु वि णिय कम्म फलु जो तहिं राउ ण जाइ ।
 सो णवि बधइ कम्म पुणु सचिउ जेण विलाइ ॥17॥
 राय-दोसवे परिहरवि जे मम जीव णियति ।
 ते सम भावि परिट्ठिया लहु णिब्बाणु लहति ॥18॥
 भल्लाहँ वि णासति गुण जहँ ससग्ग पलेहिं ।
 वइसाणरु लोहहँ मिलिउ तँ पिट्ठिपइ घणेहिं ॥19॥
 जिण्णि वत्थि जेम वुहु देहु ण मण्णइ जिण्णु ।
 देहिं जिण्णि णाणि तहँ अप्पु ण भण्ण जिण्णु ॥20॥
 भिण्णउ वत्थु जि जेम जिय देहहँ भण्णइ णाणि ।
 देहु वि भिण्णउँ णाणि तहँ अप्पहँ भण्णइ जाणि ॥21॥
 □ (परमात्म प्रकाश से)
 त्ति-पयारो अप्पा मुण्हि परु अतरु बहिरप्पु ।
 पर जापहि अतर-सहिउ बाहिरु चयहि णिभतु ॥22॥
 मिच्छा-दसण मोहिपउ परु अप्पा न मुणेइ ।
 सो बहिरप्पा जिण-भणिउ पुण ससार भमेइ ॥23॥
 मिहि-वावार-परिट्ठिया हेयाहेउ मुणति ।
 अणुदिणु क्षाएहि देउ जिणु लहु णिब्बाणु लहति ॥24॥
 जह सल्लेण ण लिपपियइ कमलणि पत्त कपानि ।
 तह कम्मेहि ण लिप्पियइ जइ रइ अप्प सहावि ॥25॥
 राय रोस वे परिहरवि जो समभाउ मुणेइ ।
 सो सामाइउ जाणि फुडु वेवति एम भणेइ ॥26॥
 (योगसार से)

तुलसीदास

(1)

रघुवर बाल छवि कहीं बरनि ।
 सबल सुखकी सीव षोडि मनोज सोभाहरनि ॥ 1 ॥
 यसी मानहु चरन कमलनि अरुनता ताज तरनि ।
 रुचिर नूपुर विविनी मन हरति रुनमुन बरनि ॥ 2 ॥
 मजु मेचक मृदुल तनु अनुहरति भूपन भरनि ।
 जनु सुभग सिंगारसिमु तरु फर्ह्यो है अदभुत फरनि ॥ 3 ॥
 भुजनि भुजग सरोज नयननि, वदन विधु जित्यो लरनि ।
 रहे कुहरनि, सलिल, नम, उपमा अपर दुरि हरनि ॥ 4 ॥
 लसत बर प्रतिबिम्ब मनि-आंगन घुटुरुवनि चरनि ।
 जनु जलज सपुट मुछवि भरि भरि घरति उर घरनि ॥ 5 ॥
 पुण्यफल अनुभवति सुतहि विलोकि दसरथ घरनि ।
 बसति तुलसी हृदय प्रभु किलकनि ललित लरखरनि ॥ 6 ॥

(2)

रगभूमि आए दसरथ के किसोर हैं ।
 पेखना सो पेखन चले है पुर नर नारि,
 बारे ब्रूढ़े अध-पगु करत निहोर हैं ॥ 1 ॥
 नील पीत नीरज कनक मरकत धन
 दामिनि बरन तनु रूपके निचोर हैं ।
 सहज सलोने राम लपन ललित नाम
 जमे सुने तसेई कुवर सिरमौर हैं ॥ 2 ॥
 चरन सरोज चारु जघा जानु ऊरु बटि,
 कधर बिसाल, बाहु बडे बरजोर हैं ।
 नीकेकै निपग कसे बरकमलनि लस
 बान बिसिपासन मनोहर बठोर हैं ॥ 3 ॥

काननि कनकफूल, उपवीत अनुकूल,
 पियरे द्रुकूल बिलसत आछे छोर है ।
 राजिव नयन, बिधुबदन, टिपारे सिर
 नख सिख अगनि ठगौरी ठौर ठौर हैं ॥ 4 ॥

सभा-सरवर लोक-कोकनद-कोफगन,
 प्रमुदित मन देखि दिनमनि भौर हैं, ॥ १ ॥
 अबुध असैले मन मैले महिपाल भये, ॥ १ ॥
 कछुक उचुक कछु कुमुद चकोर है ॥ 5 ॥
 भाईसा कहत बात, कौसिकहि सकुचात,
 बोल घन घोर से बोलत धोर धोर है ।
 सनमुख सबहि, बिलोकत सबहि नीके
 हृपासो हेरत हेंसि तुलसीकी मार हैं ॥ 6 ॥

(3)

दूलह राम, सीय दुलही री।

घन दामिन बर बरन, हरन मन सुदरता नखसिखनिबही, री ॥ 1 ॥
 ब्याह विभूपन-बसन विभूपित, सखि अवलि लखि ठगि सी रही, री ।
 जीवन जनम लाहु, लोचन फल है इतनोइ लख्यो आजु सही री ॥ 2 ॥
 सुखमा सुरभि सिगार छीर दुहि मयन अमियमय कियो है बही,
 मधि माखन सिम राम सँवारे, सकल भुवन छवि मनहु मही री ॥ 3 ॥
 तुलसिदास जोरी देखत सुख सोभा अतुल न जाति कही री
 रूप रासि बिरची बिरचि मनो सिलालवनि रति काम लही री ॥ 4 ॥

(4)

बिलोने दूरितें दोड चीर ।

उर आयत आजानु सुमग भुज, श्यामल-नौर सररीर ॥ 1 ॥
 सीस जटा, सरसीरुह लोचन बने परिधन मुनिचीर ।
 निकट निषग, सग सिय सोभित करनि धुनत धनु-तीर ॥ 2 ॥
 मन अगहुँड तनु पुलक सिथिल भयो नलिन-नयन भरे नौर ।
 गडत गोड मानो सकुच पक महें कडत प्रेम-बल धीर ॥ 3 ॥
 वृक्षत चित्रकूट कहें जेहि तहि, मुनि बालकनि बतायो ।
 तुलसी मनहुँ फनिक मनि डूढत निरखि हरपि हिय धायो ॥ 4 ॥

(5)

तुम्हारे बिरह भई गति जोन ।

चित्त दै सुनहु राम करनानिधि ! जानौ कछु पै सकौ कहि हौं न ॥
 नोचन नीर वृषिनके धन ज्या रहत निरतर नोचनन कान ।
 हा' धुनि-पगो लाज पिजरी महै राखि हिये बडे बधिक हठि मोन ॥
 जेहि वाटिका वमति तहै खग मृग तजि-तजि भजे पुरातन भौन ।
 स्वास समीर भेंट भइ नारेहु, तेहि मग पगु न धर्या तिहुँ पौन ॥
 तुलसिदास प्रभु ! दशा सीयकी मुख करि कहत होति अति गौन ।
 दीज दरस, दूरि बीजे दुख ही तुम्ह आरत-आरति-दौन ॥ 4 ॥

(6)

हृदय घाउ मेरे पीर रघुबीर ।

पाइ सजीवन जागि कहत या प्रेमपुलकि विसराय सरीर ॥ 1 ॥
 मोहि कहा ब्रूषत पुनि पुनि जैसे पाठ-अरथ चरचा वीर ।
 साभा सुख छति लाहु भूपकहूँ, केवल काति मोल हीर । ॥ 2 ॥
 तुलसी सुनि सौमिनि वचन सब धरि न सकत धीरी धीर ।
 उपमा राम लखन की प्रीतिकी क्या नीज खोर नीर । ॥ 3 ॥

(गीतावली से)

सत स्वभाव-वर्णन

दोहा

सरल बरन भाषा सरा सरल अथमय मानि ।
 तुलसी सरल सतजन नाहि परी पहिचानि ॥ 1 ॥
 तुलसी ऐसे कहूँ कहूँ धर्य धरनि बह सत
 परकाजे परमारथी प्रीति तिये निवहत ॥ 2 ॥
 बोल बचन बिचारि कै लीहे सत सुभाव ।
 तुलसी दुइ दुवचन क पय देत नहि पाव ॥ 3 ॥
 मत्रु न काहूँ करि गनै मित्र गनै नहि काहि ।
 तुलसी यह मत सतको बालै समता माहि ॥ 4 ॥
 मुख दीखत पातक हरै परसत कम बिलहि ।
 बचत सुनत मन मोहगत, पूरुव भाग मिलहि ॥ 5 ॥

सीतल बानी सत की, ससिहू ते अनुमान ।
 तुलसी कोटि तपन हरै जो कोज धारै कान ॥ 6 ॥
 कोमल बानी सत की, सवत अमृतमय ग्राइ ।
 तुलसी ताहि कठोर मन सुनत मै न होइ जाइ ॥ 7 ॥
 अति कोमल अरु विमल रुचि मानस में मल नाहि ।
 तुलसी रत मन होइ रहै, अपने साहिब माहि ॥ 8 ॥
 जाके मन ते उठि गई तिल तिल तृप्ता चाहि ।
 मनसा बाचा कमना, तुलसी बदत ताहि ॥ 9 ॥
 कचन बाचहि सम गनै कामिनि काष्ठ पपान ।
 तुलसी ऐसे सतजन, पृथ्वी ब्रह्म समान ॥ 10 ॥

सत-महिमा वर्णन

को बरनै मुख एक तुलसी महिमा सत की ।
 जिन्ह के विमल विवेक सेस महेस न कहि सकत ॥ 11 ॥
 धय धय माता पिता धय पुत्र बर सोइ ।
 तुलसी जो रामहि भजे, जरेहुँ कैमेहुँ होइ ॥ 12 ॥
 महि पयो करि निधु मसि, तरु लेखनी बनाइ ।
 तुलसी गनपति सा तदपि, महिमा लिखी न जाइ ॥ 13 ॥
 तुलसी जाके बदन ते धोखेहुँ निवसत राम ।
 ताके पग की पगतरी, मेरे तन को चाम ॥ 14 ॥
 अति ऊँचे भूधरनि पर भुजगन के अस्थान ।
 तुलसी अति नीचे सुखद, ऊख अन्न अरु पान ॥ 15 ॥
 तुलसी भगत सुपच भली भजे रैन दिन राम ।
 ऊँचो बुल बेहि काम की, जहाँ न हरि को नाम ॥ 16 ॥
 ('वैराग्य-सदीपनी' से)

धनुमङ्ग

देखि सपुर परिवार जनक हिय हारेउ ।
 नृप समाज जनु तुहित बनज बन मारउ ॥ 1 ॥
 यौसिक जनकहि कहेउ देहु अनुसासन ।
 देखि भानु बुल भानु इसानु सरासन ॥ 2 ॥

मुनिवर तुम्हें वचन मेरा महि डोलहि ।
 तदपि उचित आचरत पांच भल बोलहि ॥ 3 ॥
 बानु धानु जिमि गयउ गवहि दसकघर ।
 को अबनी तल इन सम बीर धुरधर ॥ 4 ॥
 सब मल विछोहनि जानि मूरति जनक कौतुक देखहू ।
 धनु सिधु नप बल जल बढ्यो रघुवरहि कृभज लेखहू ॥ 5 ॥
 मुनि सकुचि सोचहि जनक गुर पद बदि रघुनदन चले ।
 नहि हरप हृदय विपाद कछु भए सगुन सुभ मगल भले ॥ 6 ॥
 बगिसन लगे सुमन सुर दूदुभि बाजहि ।
 मुदित जनक पुर परिजन नूपगन लाजहि ॥ 7 ॥
 महि महिघरनि लखन बह बलहि बढावनु ।
 राम चहत सिव चापहि चपरि चढावनु ॥ 8 ॥
 गए सुमायै राम जब चाप समीपहि ।
 सोच सहित परिवार विदेह महीपहि ॥ 9 ॥
 कहि न सकति कछु सकुचति सिय हियै सोचइ ।
 गौरि गनेस गिरीसहि सुमिरि सकोचइ ॥ 10 ॥
 प्रेम परखि रघुबीर सरासन भजेइ ।
 जनु मृगराज किसोर महाराज भजेइ ॥ 11 ॥
 गजेउ सो गजेउ घोर घुनि सुनि भूमि भूधर लरखरे ।
 रघुबीर जस मुकता बिपुल सब भुवन पट्ट पेटक भरे ॥ 12 ॥
 हित मुदित अनहित ददित मुन्त्र छवि बहत बवि धनु जाय की ।
 जनु भार चक्क चकार करव मघन कमल तडाग की ॥ 13 ॥
 प्रभुहि माल पहिराइ जानकिहि ल चली ।
 सग्यो मनहु विधु उर्य मुदित करव बली ॥ 14 ॥
 बरपहि विबुध प्रमून हरपि बहि जय गए ।
 गुण सनेह भर भुवन राम गुर पहुँ गए ॥ 15 ॥
 ('जानकी मगल न)

कामु से रूप प्रताप दिनेसु से सोमु से सील गनेसु से माने ।
हरिचद्रु से साचे बडे विधि से मघवा से महीप, विपं सुख साने ॥
सुक से मुनि, सारद से दक्ता, चिरजीवन लोमस ते अधिकाने ।
ऐस भए तो कहा 'तुलसी, जो पै राजिवलाचन रामु न जाने ॥1॥

रानी में जानी अयानी महा पवि पाहनहू तें कठोर हियो है ।
राजहु काजु अकाजु न जायो, बह्यो तियको जेहि कान कियो है ॥
ऐसी मनोहर मूरति ए, विछुरें कसे प्रीतम लोगु जिघा है ।
जाखिनमे सखि ! राखिबे जोगु इहे किमि कै बनबासु दियो है ॥2॥

सोस जटा उर बाहु बिसाल बिलोचन लाल तिरछी सी भीहैं ।
तून सरासन दान धरें तुलसी बन मारगमे सुठि सोहै ॥
सादर बारहि बार सुभायें चितै तुम्ह त्यो हमरा मनु भाहै ।
पूछति ग्रामवधू सिय सो कही सावरे से सखि रावरे का है ॥3॥

सुनि सुन्दर बैन सुधारस साने सयानी है जानकी जानी भली ।
तिरछे करि नैन दै सैन तिहैं समुझाइ कछू मुसुवाइ चली ॥
तुलसी तेहि औसर सोहैं सबे अवलाकति लोचनलाहू अली ।
अनुराग तडाग मे भागु उदै विगसी मना मजुन कजकली ॥4॥

धीर धीर कहैं चलु देखिअ जाइ जहा सजनी ! रजनी रहिहैं ।
कहिहै जगु पोच न सोचु कछू फलु लाचन आपन तो लहिहैं ॥
सुखु पाइहैं कान सुनें बतिया कल आपुममे कछु प कहिहैं ।
तुलसी अति प्रेम लगी पलकै, पुलकी लखि रामु हिय महि हैं ॥5॥

सावरे गोरे सलाने सुभायें मनोहरतां जिति मैनु लियो है ।
बान कमान, निपग कसैं सिर सोहैं जटा, मुनिदेषु कियो है ॥
सग लिऐं विधुबैनी बधू रतिको जेहि रचक रघु दिया है ।
पायन तौ पनही न पयादेहि कयो चलिहैं सकुचात हिमा है ॥6॥

बनिता बनो स्पामल गौरवे बीच,

बिलोकहु, री सखि ! मोहि सी हूँ ।

मगजोगु न कोमल, क्यों चलिहै

सकुचाति मही पनपकज छवै ॥

तुलसी सुनि ग्रामवधू बियकी,
 पुलकी तन भी चले लोचन च्चं ।
 सब भाँति मनोहर मोहनरूप,
 अनूप हैं भूपके बालक हैं ॥ 7 ॥

(‘कवितावली से)

चित्रकूट पप तीर सो सुरतरु बास ।
 लखन राम सिय सुमिरहु तुलसीदास ॥ 1 ॥
 तप तीरथ मख दान नेम उपवास ।
 सब ते अधिक राम जपु तुलसीदास ॥ 2 ॥
 माय बाप गुर स्वामि राम कर नाम ।
 तुलसी जेहि न सोहाइ ताहि विधि बाम ॥ 3 ॥
 जान आदि कवि तुलसी नाम प्रभाउ ।
 उलटा जपत कोल ते भए रिपि राउ ॥ 4 ॥
 महिमा राम नाम कै जान महेस ।
 देत परम पद कासी करि उपदेस ॥ 5 ॥
 बलसजोनि जिये जानेउ नाम प्रतापु ।
 कौतुक सागर मोखेउ करि जिय जापु ॥ 6 ॥
 तुलसी सुमिरत राम सुलभ फल चारि ।
 वेद पुरान पुकारत बहत पुरारि ॥ 7 ॥
 दोष दुरित दुख दारिद दाहक नाम ।
 सबल सुमगल दायक तुलसी राम ॥ 8 ॥
 केहि गिनती मह गिनती जस बन घास ।
 राम जपत भए तुलसी तुलसीदास ॥ 9 ॥
 कामधेनु हरि नाम कामतरु राम ।
 तुलसी सुलभ चारि फल सुमिरत नाम ॥ 10 ॥

(बरवै रामायण स)

ग्यान कहै अग्यान विनु तम विनु कहै प्रकास ।
 निरगुन कहै जो सगुन विनु सो गुरु तुलसीदास ॥ 1 ॥

ग्यानी तापस सूर कवि कौबिद मुन आगार ।
 वहि वै लोभ विह्वना कीहि न एहि ससार ॥ 2 ॥
 मान राखिबो मांगिबो पिय मा नित नव नेहु ।
 तुलसी तीनिउ तव फब जौ चातक मत लहु ॥ 3 ॥
 तुनसी चातक मांगनी एक एक धन दानि ।
 देन जो भू भाजन भरत लेत जो घूटक पानी ॥ 4 ॥
 नहि जाचत नहि मग्रही सोस नाइ नहि लेइ ।
 तेमे मानी मागनेहि को वारिद विन देइ ॥ 5 ॥
 सुजन सुतरु बन ऊख सम खल टक्का रुखान ।
 परहित अनहित लागि सब सांसति सहन समान ॥ 6 ॥
 पिअहि सुमन रस अलि विपट काटि कोल फल खात ।
 तुलसी तरुजीवी बुगल सुमति नुमति की बात ॥ 7 ॥
 अबसर कौडी जो चुर्क बहुरि दिऐ का लाख
 दुइज न चदा देखिऐ जदी कहा भरि पाख ॥ 8 ॥
 उत्तम मध्यम नीच गति पाहन सिक्ता पानि ।
 प्रीति परिच्छा तिहुन की बैर बितिश्रम जानि ॥ 9 ॥
 पुय प्रीति पति प्रापतिउ परमारथ पथ पांच ।
 लहाहि सुजन परिहरहि खल सुनहु सिखावन साच ॥ 10 ॥
 नीच निरादरही सुखद आदर सुखद बिसाल ।
 बदरी बदरी बिटप गति पेखहु पनस रसाल ॥ 11 ॥
 बसि कुसग चह मुजनना ताकी आस निरास ।
 तीरथहु को नाम भो गया मग्ह के पास ॥ 12 ॥
 राम कृपा तुलसी मुनभ गग सुसग समान ।
 जो जल परै जो जन मिलै कीजै आपु समान ॥ 13 ॥
 जड चेतन गुन दोष भय बिस्थ कीह करतार ।
 सत हस गुन गर्हाहि पय परिहरि बारि बिकार ॥ 14 ॥
 भलो कर्हाहि विनु जानेहु विनु जानै अपवाद ।
 ते नर गाडुर जानि जिये करिय न हरप विपाद ॥ 15 ॥
 पर सुख सपति देखि मुनि जरहि जे जड विनु आगि ।
 तुलसी तिन के भागते चले भलाई भागि ॥ 16 ॥

दस काल बरता बरम बचन बिचार बिहीन ।
 ते सुगतर तर दारिद्री गुरसरि तीर मलीन ॥ 17 ॥
 बोन न गोटे भारिते माटी राटी माफ ।
 जीति सहग सम हारिबो जीते हारि निहार ॥ 18 ॥
 रोप न रसना छालिऐ बर छोलिअ तरवारि ।
 सुनत मधुर परिनाम हित बालिअ बचन विचारि ॥ 19 ॥
 मधुर बचन बट्टु धोलिबो विनु अम भाग अभाग ।
 बुद्धु बुद्धु बलबठ रब वा का बररत वाग ॥ 20 ॥
 मिधु तरन वपि गिरि हरा वाज साई हित दोउ ।
 तुलसी समयाहि सब बडो भूझत बडु वाउ कोउ ॥ 21 ॥
 तुलसी असमयबे मखा धीरज धरम बिबव ।
 साहित साहस सत्यव्रत राम भरामो एव ॥ 22 ॥
 दीरघ रोगी दारिद्री कटुबच कोनुप लोग ।
 तुलसी प्राण समान तउ होहि निरादर जोग ॥ 23 ॥
 पाही खेती लगन बट रिन बुझ्याज मग खेत ।
 वर बडे मो आपने किए पाच दुख हेत ॥ 24 ॥
 रीमि आपनी बूझि पर खीझि विचार बिहीन ।
 ते उपदेस न मानही मोह महोदधि मीन ॥ 25 ॥
 वरपत हरपत लोग सब करपत लखै न कोइ ।
 तुलसी प्रजा सुभाग ते भूष भानु सो होइ ॥ 26 ॥

(दोहावली मे)

रसखान

भक्ति

मानुष हीं तो वही रमपान वसी ब्रज गोकुल गाँव के ग्वारन ।
जो पशु हा तो वहा बस मरो चरो नित नद की धेनु मँझारन ।
पाहन हीं तो वही गिरि को जो धर्यो वर छत्र पुरदर धारन ।
जो खग हीं तो वसेरो बरी मिलि कालिंदी कूल कदब की डारन ॥ 1 ॥

जो रसना रस ना बिलसै तेहि देहु सदा निज नाम उचारन ।
मो वर नीकी करै करनी जु पै कूज बुटीरन देहु बुरारन ।
सिद्धि समृद्धि सबै रसपानि लहीं ब्रज रेनुका-अग सँवारन ।
साख निवास मिलै जु प तो वही कालिंदी कूल कदब की डारन ॥ 2 ॥

या लकुटी अरु कामरिया पर राज तिहूँ पुर को तजि डारी ।
आठहु सिद्धि नवी निधि को सुख नद की गाइ चराइ बिसारी ।
ए रसखानि जबै इन नैनन तें ब्रज के बन वाग तडाग निहारौं ।
कोटिक हूँ कलघौन के धाम करील के कूजन ऊपर धारी ॥ 3 ॥

बैन वही उनको गुन गाइ औ मान वही उन सा सानी ।
हाथ वही उन गात सर अरु पाइ वही जु वही अनुजानी ।
जान वही उन आन के सग और मान वही जु क मनमाती ।
न्या रसपानि वही रसखानि जु है रसखानि सो है रसखानि ॥ 4 ॥

सेस सुरेस दिनेस गनेस प्रजेस धनेस महेस मनावी ।
कोऊ भवानी भजौ मन की सब आस सब बिधि जाइ पुरावी ।
कोऊ रमा भजि लेहु महाधन, कोऊ बहूँ मनबोछित पावौ ।
प रसखानि वही मेरो माधन और मिलाक रही कि नमावौ ॥ 5 ॥

गुज गरें सिर मोरपखाँ अरु चाल गयद की मो मन भाव ।
साँवरो नदकुमार सबै ब्रजमडली मे ब्रजराज कहाव ॥
साज समाज सब सिरताज और छाज की बात नही कहि आवैं ।
ताहि अहीर की छोहरिया छछिया भरि छाछ पै नाच नचाव ॥ 6 ॥

सपति सा सवुताइ कुवेरहि रूप सा दीनी चिनीती बनगहि ।
भोग के फे सलचाइ पुर दर जोग क गग लई धरि मगहि ।
ऐसे भयो ती बहा रसखानि रस रसन। जो जु मुक्ति-तरगरि ।
दे बित ताके न रग रवयो जु रह्यो रचि राधिका रानी के रगहि ॥ 7 ॥

धन-लीला

गोरम गाँव ही में बिचिवो नही नद मुखानल झारन ।
मैल गह चलियै रसखानि तो पाप बिना डरियै बिहि वारन ।
नाहि री ना भट्ट कया करि क बन पठन पाइबी लाज सम्हारन ।
बृजनि नदकुमार बस तहाँ मार बस कचनार की डारन ॥ 8 ॥

गोरम-लीला

बारही गोरस बेचि री आशु तू माइ के मूल रूप बत मीठी ।
आवत जात ही हाथी साँझ भट्ट जयुना मतरौड लीं बीठी ।
पार गएँ रसखानि कहै अँखिया कहँ होहिगो प्रेम कनौडी ।
राघे बलाइ ल्यो जाइगी बाज अबै ब्रजराज यनेह की डौडी ॥ 9 ॥

दान-लीला

छीर जी चाहत चीर गह एज लेउ न बेक्षिक चीर अचैही ।
चाउन के मिस माउन माँगत खाउ न माखन केतिक यैही ।
जाति ही जिय की रसखानि सु काहे कीँ एतिक बाज बढही ।
गोरस के मिस जो रस चाहत सो रस काहजू नेकु न पैही ॥ 10 ॥

दधिदान

एक तँ एक ली वानन में रहें ढीठ सखा सब लीने कन्हाई ।
आवत ही हों लीं कही कोउ कसे सहै अति की अधिकाई ।
खायी दही मेरो भाजन फारचौ न छोडत चीर दिवाएँ दुहाई ।
सौह जसोमति की रसखानि तँ भायें मरु करि छूटन पाई ॥ 11 ॥

उत्साहना

काहू को मायेन खाधि गयो अप काहू को दूध दही डरकायो ।
काहू को चीर लँ रुख चढयो अरु काहू का गुजछरा छहरायो ।
मानै नहा बरजे रसखानि सु जानिय राज इह घर आयो ।
आव री बूझ जसोमति सा यह छोहरा जायो कि मेव मंगायो ॥ 12 ॥

ग्वालिन द्वैक भुजान गहँ रसखानि को लाई जसोमति पाहँ ।
 लूटत है कहे ये वन मे मन में कहे ये सुख लूट कहाँ है ।
 अग ही अग ज्यों ज्यों ही लगें त्यों त्यों ही न अग ही अग समाहै ।
 वै पछलें उलटें पग एक ती वे पछलें उलटें पग जाह ॥ 13 ॥

सपत्नी-भाव

काह कहूँ सजनी सग की रजनी नित बीतै मुकुद को हेरी ।
 धावन रोज कहे मनभावन आवन की न कर्वाँ करी फेरी ।
 सौतिन भाग बढघी ब्रज मे जिन लूटत हैं निसि रंग घनेरी ।
 मो रसखानि लिखी बिधना मन मारि कै आपु बनी हौँ अहेरी ॥ 14 ॥

मिलन

बक बिलोकनि हँसनि मुरि, मधुर वन रसखानि ।
 मिले रसिक रसराज दोऊ हरखि हिये रसखानि ॥ 15 ॥
 एक मम इक ग्वालिन को ब्रजजीवन खेलत दृष्टि परघी है ।
 बाल प्रवीन सक करि क सरबाइ कै मोरन चीर घरघी है ।
 यौँ रस ही रस ही रसखानि सखी अपनी मनभायो करघो है ।
 नद के लाडिले डाकि दै सोस हहा हमरो बर हाथ भरघो है ॥ 16 ॥

वियोग

काह कहूँ रतिया की कथा बतियाँ कहि आवत है न कछू री ।
 आई गोपाल लियौ भरि अक बिधो मनभायो पियौ रस कूरी ।
 ताही दिना सो गडी अखियाँ रसखानि मेरे अग अग म पूरी ।
 पै न लिखाई पर अब बावरी द कै वियोग विधा की मजूरी ॥ 17 ॥

प्रिय को रिझाना

देखिहो आखिन सो पिय को अरु कानन सा उन बँन को प्यारी ।
 बाँके अनगनि रगनि की सुरभीनि सुगधनि भाव म डारी ।
 त्यों रसखानि हिये म धरो वहि साँवरी भूरति मन उजारी ।
 गाव भरो काड नाव धरी पुाँ साँवरी हौँ बनिहौँ सुकुमारी ॥ 18 ॥

मानिनी

जो कबहू मग पाँव न देन सु तो हित लालन आपुन गोन ।
 मेरो कष्टा करि मौन तजो कहि मोहन सौँ बलि बोल सलीन ।
 सौँहैं दिवावत ही रसखानि तू मोहँ कर किन लाखनि लौन ।
 अनौबी तू मानिनि मान करयो किन मान बसत म कीनी है कीनी ॥ 19 ॥

क्रियाविदग्धा

खेलै अलीजन के गन मे उत प्रीतम प्यारे सो नेह नवीनो ।
 बैननि बोध करै इत कौ, उत सननि मोहन को मन लीनो ।
 नैननि की चलिवी बछु जानि सखी रसखानि चितवे की कीनो ।
 जा लखि पाइ जैमाइ गई चुटकी चटकाइ विना कर दीनो ॥ 20 ॥

वशी

जल की न घट भरै मग की न पग धरै
 घर की न कछु करै बैठी मर साँसुरी ।
 एकै सुनि लोट गई एकै लोट पोट भई
 एकनि के दगनि निकसि आए साँसुरी ।

कहै रसखानि सो सबै ब्रज बनिता वधि
 बधिक कहाय हाय भई कुलहाँसुरी ।
 करिये उपाय बाँस डारिये बटाय
 नाहि उपजगो बाँस नाहि बाजँ फेरि बाँसुरी ॥ 21 ॥

बाल्ह परधौ मुरली सुनि मे रसखानि जू कानन नाम हमारो ।
 ता दिन तें न धीर रह्यौ जग जानि लयो अति कीनौ पँवारो ।
 गाँवन गाँवन मे अब तो वदनाम भई सब सो क किनारो ।
 तो सजनी फिरि फेरि कह्यौ पिय मरो वही जग ठोकि नगारो ॥ 22 ॥

ब्रज की बनिता सब घेरि कह्यौ तेरो डारो बिगारो बहा कम री ।
 अरी तू हमको जमकाल भई नैक काह गही तो बहा रस री ।
 रसखानि भली विधि आनि बनी बसियो नहि देत दिना दस री ।
 हम तो ब्रज को बसियोई तजौ वम री ब्रज बरिन तू बँसरी ॥ 23 ॥

चंद सो आनन मेन मनोहर बन मनोहर मोहत है मन ।
 बक बिलोबनि लोट भई रसखानि हियो हित दाहत न तन ।
 मैं तब तें कुलबानि की मैठ नखी जु सखी अब डोलत ह्यौ बन ।
 बेनु बजावत आवत है नित मेरी गली ब्रजराज को मोहन ॥ 24 ॥

बेनु बजावत गोधन गावत ग्वालन मग गली मधि आयी ।
 बाँसुरी मे उनि मेरोई नाँव सुग्वानिनि के मिस टरि सुनायो ।
 ए सजनी सुनि सास के प्रातनि नद के पाम उमास न मायो ।
 बसी बरौ रसखानि नही हित बन नही चितचोर सुरायो ॥ 25 ॥

मोहन की मुरली सुनि कै वह बीरो हूँ आनि अटा चडि झाँकी ।
 1 गोप बडेन की डीठि बचाइ कै डीठि सो डीठि मिली दुहै घाँ की ।
 देखत मोन भयो अँखियान को को करै लाज बुटुम्ब पिता की ।
 कैसेँ छुटाई छट अँटकी रमखानि दुह की बिलोरुन बाँकी ॥ 26 ॥

होली

खेलत फाग मुहाग भरी अनुरागहि लालन को घरि कै ।
 मारत ककुम केसरि के पिचवारिन मे रँग को भरि कै ।
 गेरत लाल गुलाल लली मन मोहनि मौज मिटा करि कै ।
 जात चली रसखानि अली मदमत्त मनी मन को हरि क ॥ 27 ॥

फागुन लाग्यो सखी जब तें तब तें ब्रजमडल धूम मच्यो है ।
 नारि नवेली बचै नहिँ एक बिसेख यहै सब प्रेम अँच्यो है ।
 साज सकारे वही रसखानि सुरग गुलाल लै खेल रच्यो है ।
 का सजनी तिजली न भई अरु कौन भटू जिहिँ मान बच्यो है ॥ 28 ॥

जाहु न बोऊ सखी जमुना जल राकें खडो मग नद को लाला ।
 नैन नचाइ चलाइ चित रमखानि चलावत पैम को भाला ।
 मैं जु गई हुती वरन गहर मरी करी गति टूटि गी माला ।
 होरी भई कै हरा भए लाल कै लाल गुलाल पगी ब्रजबाला ॥ 29 ॥

भ्रमरगीत

जोग सिखावत आवत है वह, कौन कहावत को है कहीं को ।
 जानति हैं वर नागर है पर नेकहु भेद लख्यो नहिँ ह्यौ को ।
 जानति ना हम और कछू मुख देखि जिय नित नदलला को ।
 जात नहिँ रसखानि हमे तजि, गखनहारो है मोरपखा को ॥ 30 ॥

लाज के लेप चढाइ क अग पची सब सीख का मत्र सुनाइ क ।
 गाडरू हूँ ब्रज लोग थक्यो करि औपद बेसक सोह दिवाइ क ।
 ऊँघो भी को रसखानि कह जिन चित्त धरी तुम एते उपाइ कै ।
 वारे विसारे को चाहैं उतारधौ जरे विप वावरे राख लगाइ कै ॥ 31 ॥

वा रसखानि गुनों मुनिवँ हियरा सत दूक हूँ फाटि गयो है ।
 जानति हैं न अछू हम ह्यौ उन वाँ पडि मत्र कहा घो दगो है ।
 सीची रहैं जिय म निज जानि क जानति हैं जस जसो लयो है ।
 लोग लुगाइ सब ब्रज माँहिँ कहैं हरि चेरी को चेरा भयो है ॥ 32 ॥

जाने कहा हम मूढ सब समुझी न तब जबही बयानि आई ।
 सोचति हैं मन ही मन री अब कीजं कहा बतियाँ जु गँवाई ।
 नीचो भयो ब्रज को सब सीस मलीन भई रसखानि दुहाई ।
 चेरी को चेटव देखहु री हरि चैरो कियी घो कहा पढि माई ॥ 33 ॥

भेती जु पं कुबरी ह्याँ सखी भरी लातन मूका बनोटती सेती ।
 सेति निवारि हिये की सब, नक छेदि क कौडी पिराह क देती ।
 देती नचाह क नाच घा रडि कों, लाल रिझावन को फल सेती ।
 सेती सदाँ रसखानि लिये कुबरी के करेजनि मूल सी भेती ॥ 34 ॥
 ('सुजान-रसखान' से)

2 दान लीला

श्रीकृष्ण—

एरी कहा बृषभानपुरा की ती दान दियेँ त्रिन जान न पैहौ ।
 जी दधिमाखन देव जु चाखन झूमत लाखन या मग ऐहौ ।
 नाहि ती जो रस सो रस ल हो जु गोरस बेचन फेरि न जैहो ।
 नाहक नारि तू रारि बढावति गारि दियेँ फिरि आपहि दैहौ । 35 ।

भीराधिका—

गारी के देबैया बनवारी तुम कहाँ कौन
 हम तो बृषभान की कुमारी सब जानो है ।
 जोर तो करीये जाइ जासो हर पाइ आई
 मुरही तें आजु मो सो कैसो हठ ठानो है ।
 बूझि देखी मन माहि अरुजत मग जात
 बूझिही निदान काह जौन कहो मानो है ।
 मेरे जान कोऊ मीरखान आव दही छीन
 तू तो है अहीर मोहि नाहि पहिचानो है । 36 ।

श्रीकृष्ण—

एरी तोह पहिचानी बृषभान हूँ का जानो नेकु
 काहू की न सका मानोँ ही अहीर ऐसो हौ ।
 मीरन को मारि मान तोरिहौ गुमान लैहौ
 आज तोसोँ दान लैहौ देखियेँ जु जैसो हौ ।

फोरिहो मट्टकी माट लै दही करोगी लूट,
 जैही कौने सु ती घाट बाट रोकें बसो ही ।
 कहा कही राघे तोहि अजहूँ न चीहै मोहि
 मेरी ओर देखि नेकु दानी काह कैसा ही । 37 ।

धीराधिका—

जोही तिहारी ओर नदगाव के किसोर
 माखन क चोर तुम गोकुला के बामी ही,
 जसुदा तिहारी माइ ऊखल सौं बाधो जाइ,
 दानी प कहाए आइ भए कामरासी ही ।
 कस सो कहौगी जाइ माँगिहो तुमै धराइ
 रहौगे कहाँ छिपाइ जौ बडे मवासी ही ।
 गोरस को दान हम अजहूँ न सुने कान
 नाहे लाल हम सो बरत रोज हासी ही । 38 ।

भीकृष्ण—

दान प न कान सुन लैही सो गुमान भजि,
 हासी पर हासी परहासी आज करौंगा ।
 जेती तुम ग्वालिन तितेक सब राक् राखी
 जमुना की ओटि मे जु सबै काम सरौगा ।
 जाको तू कहति कस ताहि को करौं विधस,
 ही ती जदुबस बीर काहू सो न डरौगो ।
 भूषन जतारि चीर फारि चीर डारि दही,
 नन्द की दुहाई खात टेक सो न टरौंगो । 39 ।

धीराधिका—

नद की न दासी हम जातिहू मे नाही कम,
 एक गाव बसो स्याम भीर भए वादी हो ।
 जमुना के तीर तुम चीर हू चुराइ रहो
 ताहू की न लाज आई और के फसादी हो ।
 रोकत हो टोकत हो बाट माहि साट छाह,
 माट फोरि चाटो दही यही गुन आदी हो ।
 जो कहूँ बँठारिहो न पारिहो रुआव माहि,
 नोन की न गोन लीहै आदी हू न सादी हा । 40 ।

श्रीकृष्ण—

मरों को कर नियाव हों तो तीन लोक राव,
 हमें घेरो याही चाव दाव भलो पायो है ।
 त्रिदावन वृज माह कदम की छाह चलो
 अब भरि भेटि लैही जमो मन भायो है ।
 हीरा मनि मानिक की काच और पातिन की
 मातिन की गात की जगात ही लगायो है ।
 गोरस ती ढेर ढेर खाहु पीयो वेर वर
 दखहु सलोना रूप दानी बाहु आयो है । 41 ।

श्रीराधिका—

नौ लख भाय सुनी हम नन्द के तापर दूध दही न अधान ।
 मागत भीख फिरी बन ही बन झूठि ही दानन के मन माने ।
 और की नारिन के मुख जोवत लाज गहो कछु होहु समान ।
 जाहु भले जु भले घर जाहु चले बस जाहु त्रिदावन जाने । 42 ।
 ('दान लीला स)

3 प्रेम

प्रेम अयनि श्रीराधिका प्रेम बरन नन्दनन्द ।
 प्रेमवाटिका के दोऊ माली मानिन द्वन्द ॥1॥
 प्रेम प्रेम सब कोउ कहत, प्रेम न जानत कोइ ।
 जो जन जान प्रेम तो, मर जगत बयो रोइ ॥2॥
 प्रेम अगम अनुपम अमिन सागर-सरिस बखान ।
 जो आवत यदि दिग बहुरि जात नाहि रसखान ॥3॥
 वेम-वारनी छानि वै, वमन भए जलधीस ।
 प्रेमहि तें विषयान करि पूज जात गिरोस ॥4॥
 प्रेम रूप दपन ग्रहा रचै अजुवो खेल ।
 या म भपनी रूप कछु लधि परिहै अनमल ॥5॥
 कमल ततु सो छीन अरु कठिन खडग की धार ।
 अति सूधो टढ़ो बहुरि प्रेमपथ अनिवार ॥6॥
 लोक वेद मरजाद सब लाज बाज सदेह ।
 देत बहाए प्रेम करि विधि निपद्य को नेह ॥7॥

कबहुँ न जा पय भ्रम तिमिर रहै सदा सुख चद ।
 दिन दिन बाढत ही रहत होत कबहुँ नहि मद ॥8॥
 भलें वृथा करि पचि मरी ज्ञान गरुर बढाय ।
 बिना प्रेम फीको सबै कोटिन कियें उपाय ॥9॥
 स्मृति पुरान आगम स्मृतिहि प्रेम सबहि को सार ।
 प्रेम बिना नहि उपज हिय पेम बाज अंकुवार ॥1०॥
 आनंद अनुभव होत नहि बिना प्रेम जग जान ।
 क वह विषयानंद क ब्रह्मानंद बखान ॥11॥
 ज्ञान कम र उपासना, सब अहमिति को मूल ।
 दृढ निश्चय नहि होत बिन किय प्रेम अनुकूल ॥12॥
 सास्त्रन पढि पडित भए कै मौलवी कुरान ।
 जु प प्रेम जायी नही कहा बियो रसखान ॥13॥
 काम क्रोध मद मोह भय लोभ द्रोह मात्सय ।
 इन सब ही तें प्रेम है परे कहत मुनिवय ॥14॥
 बिन गुन जोवन रूप धन बिन स्वारथ हित जानि ।
 मुद्ध कामना तें रहित प्रेम सबल रस यानि ॥15॥
 अति सूछम कोमल अतिहि अति पतरो अति दूर ।
 प्रेम कठिन सब तें सदा, नित इकरस भरपूर ॥16॥
 जग म जब जायी परै अरु सब कहै कहाइ ।
 प जगदीश र प्रेम यह दोऊ अकथ लखाइ ॥17॥
 जेहि बिनु जान बछुहि नहि जायी जात बिसप ।
 सोइ प्रेम, जेहि जानि के रहि न जान कुछ सप ॥18॥
 दपति मुख अरु विषय रस, पूजा निष्ठा ध्यान ।
 इन तें पर बखानियै, मुद्ध प्रेम रसखानि ॥19॥
 मित्र कलत्र सुब-बु मुत, इनमे सहज सनह ।
 मुद्ध प्रेम इनमे नही, अकथ कथा सविषह ॥20॥
 इवअगी बिनु वारनहि इकरस सदा समान ।
 गन प्रियहि सबस्व जो, सोई प्रेम प्रमान ॥21॥

डर सदा चाहे न कछु, सहै सबै जो होइ ।
 रहै एकरस चाहि कै, प्रेम बखानौ सोइ ॥22॥
 प्रेम प्रेम सब कोउ कहै कठिन प्रेम की फास ।
 प्रान तरफि निकरै नही, कवल चलत उसास ॥23॥
 प्रेम हरी को रूप है त्यों हरि प्रेम सटप ।
 एक होइ द्वयी लस, ज्यों सूरज औ धूप ॥24॥
 ज्ञान ध्यान विद्या मत्तो, मत बिस्वास विबक ।
 विना प्रेम सब धूरि है अगजग एक अनेक ॥25॥
 (' प्रेम वाटिका से)

सुन्दरदास

गुरु-महिमा

(1)

काहू सा न रोप तोप काहू सा न राग द्वेष
काहू सो न बँर भाव काहू सा न घात है
काहू सों न बकवाद काहू सो नही विपाद
काहू सो न सग, न तो काहू पच्छपात है ॥
काहू सो न दुष्ट बन काहू सो न लेन देन
ब्रह्म को विचार नछू और न सुहात है ।
सुन्दर कहत सोई ईसन को महा ईस
सोई गुरुदेव जाके दूसरी न बात है ॥

(2)

गुरु बिन ज्ञान नही गुरु बिन ध्यान नही,
गुरु बिन भातम विचार न लहतु है ।
गुरु बिन प्रेम नही गुरु बिन नेम नही,
गुरु बिन सीलहु सन्तोष न गहतु है ।
गुरु बिन ग्यान नहि बुद्धि का प्रकास नही,
भ्रमहू को नास नहि समेइ रहतु है ।
गुरु बिन वाट नहि कौडी बिन हाट नही
सुन्दर प्रकट लाक बेद या कहतु है ।

(3)

गुरु के प्रसाद बुद्धि उत्तम दसा को गहे,
गुरु के प्रसाद भय दुख विसराइय ।
गुरु के प्रसाद प्रेम प्रीतहु अधिक बाडे
गुरु के प्रसाद, राम नाम गुण गाइये ।

गुरु न प्रसाद मत्र जाग की जुगति जा
 गुरु के प्रसाद मूय म समाधि लाइय ।
 मुदर कहत गुरुदेव जो वृपालु होइ
 तिनक प्रसाद तत्व ज्ञान पुनि पाइये ।

(4)

गुरु मात गुरु तात गुरु बधु निज गात
 गुरुदेव नखसिध, सबल सवारयो है ।
 गुरु न्यि दिव्य नन गुरु दिये मुत्र बैन
 गुरुदेव मरवण दे मवद उचारया है ।
 गुरु दिग हाथ पाँव गुरु सोस भाव
 गुरुदेव पिड माहि प्राण आइ डारिया है ।
 मुदर कहत गुरुदेव जो वृपालु होइ
 फिरि घाट घडि करि मोहि निस्तारयो है ।

उपदेश

(5)

बार बार कह्या तोहि सावधान क्यू न होइ
 ममता की पोट सिर काहे को घरत है ।
 मेरो धन भरो धाम मेरो सुत मेरी वाम
 मेरे पसु मेरे ग्राम भूल्यो ही फिरतु है ।
 तू ता भयो वावरो विकाइ गई बुद्धि तरी ।
 ऐसो अघ कूप गेह ताम तू परतु है ।
 मुदर कहत तोहि नेकहू न आवे लाज
 बाज को दिगार के अकाज कयी करतु है ।

(6)

पायो है मनुष्य दह औसर बयी है गेह
 ऐसी दह बार बार कहो कहा पाइय ।
 भूलत है बावरे ! तू अबके समानो होइ
 रतन अमोल सो तो काहे कू ठगाइये ॥

समुझि विचार करि ठगन को सग त्यागि,
 ठगिवाजी देखकर मन न हुलाइये ।
 सुन्दर कहत ताते सावधान ब्यू न होइ
 हरि को भजन कर हरि म समाइये ॥

काल की विकरालता

(7)

मन्दिर महल विलायत है गज
 ऊँट दमामा दिना इव दा है ।
 तातहु मात लिया सुत बाघव
 देख धु पामर हात विछा है ।
 झूठ प्रपच सू राचि रह्यो सठ
 बाठ की पूतरि ज्यू कपि मोहै ।
 मेरि हि मरि कहै नित सुन्दर
 आँखि रागे कहि कौन कू को है ।

(8)

कै यह देह जराई कै छार
 किया कि किया कि किया कि लिया है ।
 कै यह देह जभी भहि गाडि
 दिया कि दिया कि दिया कि दिया है ।
 कै यह देह रहे दिन चार
 जिया कि जिया कि जिमा कि जिमा है
 सुन्दर काल अचानक भाइ
 लिया कि लिया कि लिया कि लिया है ।

(9)

दह सनेह न छाडत है नर
 जानत है फिर हैं यह दहा ।
 छोजत जाइ घट दिन ही दिन
 दीसत है घट को नित छेहा ।

काल अचानक झाड़ गहै कर
 ढाहि गिराइ करे तनु सेहा ।
 सुंदर जानि यहै निहचै धरि,
 एक निरजन सू कर नेहा ।

(10)

साइ रह्यो कहा गाकिल है करि
 ता सिर ऊपर काल दहार ।
 धामस धूमसि लागि रह्यो सठ,
 झाड़ अचानक तोहि पछारै ।
 ज्यू बन मे मृग वूदत फाँदत
 चित्र गले नख सू उर फारै ।
 सुंदर बाल डरै जिनके डर
 ता प्रभु कू कहू क्यू न सँभारै ।

(11)

जब ते जनम 'लेत, तब ही ते आयु घटै
 माई सो कहत मरो बडो होत गात है ।
 आज और काल और दिन दिन होत और
 दौरयो दौरया फिरत खेलत अरु खात है ।
 बालपन बीतयो जब जीवन लगो है आइ
 जीवनहु बीते वूडो, ढोकरो दिखात है ।
 सुन्दर कहत ऐस देखत ही बुझि गयो
 तल घटि गये जसे दीपक बुझात है ।

वेह एव जगत की नश्वरता

(12)

कोन भाँति बरतार किमो है सरीर यह,
 पावक के माहि देखी पानी को जमावनी ।
 नासिका सवन नन, बदन रसन बँन,
 हाथ पाँव अग नख, सीस को बनावना ।

अजब अनूप रूप चमक दमक ऊप,
 सुन्दर सोभित अति, अधिक् सुहावनो ।
 जाही छिन चेतन, मवति सीन होई गइ,
 ताहि छिन लागत है सबको अभावो ।

(13)

मातृ ती पुकार छाती, कूटि कूटि रोवति है
 बापहू कहत मेरो नदन कहीं गयो ।
 भैया हू कहन मेरो बाह आजु दूरि भई
 बहिन कहत मेरो, वीर दुख दे गयो ।
 बामिनी कहत मेरो सीस सिरताज कहीं
 उहे तत्काल रोइ, हाथ मे घोरा लया
 सुन्दर कहत काऊ, ताहि नहि जानि सक
 बोलत हुतो सो यह, छिन मे कहीं गया ।

आशा-तृष्णा

(14)

नैनन की पल ही पल मे छिन,
 आधि धरी घटिका जु गई है ।
 जाग गयो युग याम गयो पुनि,
 साँझ गई तब रात भई है ।
 भ्राज गई अरु काल्ह गई
 परसो तरसो बछु और ठई ह ।
 सुन्दर ऐसहि आयु गई
 तृष्णा दिन ही दिन डोत नई है ।

(15)

जन ही जन कू बिल्लात फिरै
 सठ याचत है जन ही जन कू ।
 तन ही तन कू अति सोच करै
 नर खात रह अन ही अन कू ।

मन ही मन की तृस्ना न मिटी,
 पुनि धावत है धन ही धन बू ।
 छिन ही छिन सुन्दर आयु घटी
 बधहू न गयो वन ही वन बू ।

(16)

जा दस बीस पचास भये सत
 होइ हजार तू लाख मगगी ।
 कोटि अरबव खरबव अमध्य
 पृथ्वीपति होन की चाह जगगी ।
 स्वग पताल की राज करी
 तृस्ना अधिकी अति आग लगगी ।
 सुन्दर एक सत्तोप बिना सठ
 तेरी तो भूख बधी न भगगी ।

आश्वासन

(17)

पाँव दिये चलने फिरने वहाँ
 हाथ दिये हरि वृत्त्य कराया ।
 कान दिये सुनिये हरि को जस
 नन दिये तिन माग दिखायो ।
 नाक दिये मुख सोभत ता करि
 जीभ दई हरि को गुण गायो ।
 सुन्दर भाज दिया परमेसुर
 पेट दिया बड पाप लगायो ।

(18)

होई निर्वित्त कर मत चितहि
 चौच दई सोइ चित्त करेगो ।
 पाउ पसार परयो किन सोवत
 पेट दियो सोइ पेट भरैगा ॥

जीव जिते जल के धन के पुनि
 पाहन मे पचाय घरंगो ।
 भूखहि भूख पुकारत है नर
 सुन्दर तू कह भूख मरगा ॥

(19)

भाजन आप घडे जितन
 भरिहैं भरिहैं भरिहैं भरिहैं जू ।
 गावत हू जिनके गुण कू
 ढरिहैं ढरिहैं ढरिहैं ढरिहैं जू ॥
 आदिहू अतहु मध्य सदा
 हरिहैं हरिहैं हरिहैं हरिहैं जू ।
 सुन्दरदास सहाय सही
 करिहैं करिहैं करिहैं करिहैं जू ॥

विश्वास

(20)

कहि कू दौरत है दसहू निसि
 तू नर देख कियो हरज का ।
 बैठि रहे दुरि क मुख मूदि
 उदारत दात खवाइ है टूका ॥
 गभ थके प्रतिपाल करी जिन
 होइ रह्यो तवही जड भूका ।
 सुन्दर कयो बिल्लाम फिर अब
 राख हृदय विश्वास प्रभू को ॥

(21)

सेचर भूचर जे जल के चर
 देत अहार चराचर पोखे ।
 वे हरि जो सबको प्रतिपालत
 ज्यू जिहि भाति तिहि विधि तोख ॥

तू अब क्यू विश्वास न राखत
 भूलत है कित घाघरि घाघ ।
 तोहि तहाँ पहुँचाय रहे प्रभु
 सुंदर बैठ रहै किन ओख ॥

देह की मलिनता

(22)

देह तो मलिन अति बहुत विकार भरी,
 ताहू माहि जरा व्याधि, सब दुख रासी है ।
 कबहुँक पेट पीर कबहुँक सिर बाय
 कबहुँक आँख कान मुख मे विधा सी है ।
 औरहू अनेक रोग नख सिर पूरि रहे
 कबहुँक स्वास चलै कबहुँक खाँसी ह ।
 ऐसो ये शरीर ताहि अपनो कै मानत है
 सुंदर कहत यामे कौन सुख बासी है ॥

(23)

जा शरीर माहि तू अनेक सुख मानि रहयो
 ताहि तू विचार या मैं कौन बात भली है ।
 मेद मज्जा मास रग रग मे रक्त भर्यो
 पेटहू पिटारी सी मैं ठौर ठौर मली है ॥
 हाडन सो भर्यो मुख हाडन के नैन नाक
 हाथ पाँउ सोऊ सब हाडन की नली है ।
 गुन्दर कहत माहि देखि जनि भूलै कोई
 भीतर भँगर भरी ऊपर ती कली है ।

मूखता

(24)

अपन न दोष देखे पर के औगुण पेखे
 दुष्ट को स्वभाव, उठि निन्दा ही करतु है ।
 जैसे कोई महल सँवारि राख्यो नीके कर
 कीरी तहा जाय छिन्न दूडत फिरतु है ॥

भीर ही तै साथ लग मात्र ही त भीर लग,
 सुंदर बहत दिन ऐसे ही भरतु है ।
 पाव के तरे की नही सूझ आग मूरख कू
 और सू बहत तेरे मिर पै बरतु है ॥

मन

(25)

जो मन नारि की और निहारत,
 तो मन होत है ताहि को रूपा ।
 जो मन वाहू सु क्रोध करै पुनि,
 तो मन है तब ही तद रूपा ।
 जो मन मायहि माया रटे नित,
 तो मन उटत माया के कूपा ।
 सुंदर जो मन ब्रह्म विचारत
 तो मन हात है ब्रह्म स्वरूपा ॥

(26)

मनही के भ्रम ते जगत यह देखियत
 मनही के भ्रम गय जात बिलात है ।
 मनही के भ्रम जेवरी म उपजत साँप,
 मन के विचारे साप जेवरी समान है ॥
 मनही के भ्रम तें मरीचिक कू जन कहै
 मनही भ्रम साँप रूपो सो दियात है ।
 सुंदर सबल यह दीस मनही को भ्रम,
 मनही को भ्रम गये ब्रह्म हाई जात है ॥

वाणी का महत्त्व

(27)

बचन ते दूर मिल बचन विगद्य ह्य
 बचन तें राग बद्ध दृष्ट्य ते ह्य ह्य
 बचन तें ज्यान उठ दृष्ट्य ते ह्य ह्य
 बचन तें मुक्ति, ह्य ह्य ते ह्य ह्य ॥

वचन तें प्यारी लाग, वचन तें दूर भगै,
 वचन तें मुरझाय वचन तें पोप जू ॥
 सुन्दर कहत यह वचन का भेद एसा
 वचन तें बघ होत वचन तें मौच्छ जू ॥

भजन न करने वाले

(28)

एक जू सबही व उर अतर
 ता प्रभु क कहू काहि न गाव ।
 सवट माहि सहाय कर पुनि
 सो अपना पति क्यू बिसरावै ॥
 चार पन्तरथ और जहाँ लगि
 आठहु सिद्धि नवो निधि पाव ॥
 सुंदर छार परी तिन के मुख
 जो हरि कू तजि आन कू ध्याव ॥

(29)

पूरण काम मदा सुख धाम
 निरजन राम मिरञ्जन हारा ।
 सेवक होई रह्यो सब की नित
 कीटहि कुजर देत अहारा ॥
 भजन दुख दरिद्र निवारण
 चित्त करे पुनि साँझ सवारा ।
 ऐसे प्रभू तजि आन उपासत
 सुंदर है तिनको मुख कारो ।
 (सुंदर विलास मे)

पद्माकर

भक्ति

(1)

ह्व गिर मंदिर मे न रह्यो,
गिरि बदर म न तप्यो तप जाई ।
राज रिज्ञाए न कै बविता
रघुराज कथा न यथामति गाई ।
यो पछितात कछू 'पद्माकर
का सा कहौ निज मूरखताई ।
स्वारथ हू न कियो परमारथ
यो ही अकारथ बस वित्ताई ।

(2)

भोग मे रोग वियोग सयोग म
योग म काय कलेस कमायो ।
त्यौं पद्माकर वेद पुराण पढ्यो,
पढि के बहु वाद बढाया ।
दौरयो दुराम मे दास भयो प
बहूँ विसराम का धाम न पायो ।
खाया गमायो सु ऐमे ही जीवन,
हाय पै राम को नाम न गाया

(3)

पेट कि चारे चपेट सही
परमारथ स्वारथ लागि बिगारे ।
यो पद्माकर भक्ति भजी
सुनि दभ के द्रोह के दीह नगारे ॥

जो गुरु जज्ञ जपातप जाल
 बिहाल परे कलिकाल के मारे ।
 कौन के आसरे आम तजौ
 सुधि लेत न कयो दसरत्थ दुलारे ॥

(4)

छोस को रात करे जा चहै अरु,
 रातिहु को करि छोस दिखावै ।
 त्यो पचाकर सील क सिंधु
 पिपीलिका के बल फीन फिरावै ।
 यो सगरत्थ ते ते दसरत्थ को
 सोइ करे जो बछू न मन भावै ।
 चाहे सुमेरु को राइ कर, रचि,
 राइ को चाहे सुमेरु बनाव ॥

(5)

ऐ ब्रजचंद गुविंद गुपाल ! सुयो क्या न एते कमाल किए मैं ।
 त्यो पचाकर आनंद के नद ही नद नदन ! जानि लिए मैं ।
 माघन चोरि क घोरिन ह्वै चले भाजि बछू भय मानि जिए मैं ।
 दूर न दौरि दुरयो जु चहौ तो दरो किन मेरे अघेरे हिए मैं ।

(6)

देखि पचाकर गुविंद की अमित छवि,
 सकर समेत विधि आनंद सो बाढ़ा है ।
 शिखरत झूमत मुदित मुमुक्षुन गहि
 अचल को छोर दोऊ हाथन ना आड़ो है ।
 पटकत पाँव हान पजनी झनुष रथ
 नर-नर तना म नीर बन बाढ़ा है ।
 भागे नन्तरानी के तनिष पय पीत बात्र
 मीन मोह टाकुर मा टुनजन टाढ़ा है ।

(7)

आइ सग अलिन के ननद पठाई नीठि
 सोहत सोहाई सीस इडरी सुपट की ।
 कहै 'पद्याकर गभीर जमुना के तीर
 नागी घट भरन नवेली नेह अटकी ।
 ताही समय माहन जू वासुरी बजाई ताम
 मधुर मलार गाई जोर बसीवट की ।
 ताने लागे लटकी रहीं न सुधि घूघट की,
 घर की न घाट की, न बाट की न घट की॥

(8)

फाग के भीर अभीरनि त्यो गहि गीविद ल गइ भीतर गोरी ।
 भाय करी मन की पद्याकर ऊपर नाय अत्रीर कि झारी ॥
 छीनि पितम्बर बम्मर त सु बिदा दइ मीड कपोलन रोरी ।
 नैन नचाय कही मुसुक्वाय—लला फिर आइयो खेलन होरी ॥

(9)

व्याघ हू तें बिहद असाधु ही अजामिल ते
 ग्राह तें गुनाही कहौ तिन म गनाआग ।
 स्वोरी ही न सूद हों न कवट कहुँ कौ त्या न,
 गौतम तिया ही जाप पग धरि आआगे ।
 राम सो कहत पद्याकर पुकारि तुम
 मर महा पापन को पारहू न पाआगे ।
 झूठोई कलक सुनि तजीही सीता-सी सती,
 साचोई कलकी ताहि कैस अपनाओग ।

(10)

पातकि पावन ही तुम राम, रहू हम पातक म मदमाते ।
 दीन के बंधु दयाल इक तुम ही हम दीन दसान ही पात ॥

पास' ही तुम बिप्रन क', हम हूँ 'पद्माकर विप्र कहात ।
या तें रटौं न हटौं प्रभ पास तें, हैं तुम तें हम त बटु नात ।

(11)

जोग जप सध्या साधु माधन सब ई तज
कीह अपराध ते अगाध मन भावत ।
तेते तजि औगन अनत पद्माकर' तौ
कीन गुन ल कैं महाराजहि रिखावते ॥
जैसे अब तसे पै तिहार बडे बाम के हैं
नही तौ न एत बन बबहूँ सुनावते ।
पावते न मो-सो जो प अधम बहूँ तो राम
कस तुम अधम उधारन कहावत ॥

(12)

जाट हूँ धना स सदना के सढ साधी भये
हाथी हूँ उबारत न बार मन लाये हैं ।
कहै पद्माकर कहै न परे ते ते जग
जे ते कपि रिच्छन के विरद बढाये है ।
साधन के हेत पन पाल्यो प्रह्लाद हूँ का
याद करी जाय सेवरी क बेर छाये हैं ।
राखत हैं राखये रखैया रघुनाथ, जन
आपने की बात सदा राखतेई आय हैं ॥

(13)

ए रे जड जीव, जानि राखू वेद भेद यहै
समृत पुराण राधी यहै ठहराय है ।
कहै 'पद्माकर सु माया परपधन का
पेखि परपच पेखने का सब भाय है !
या ते भज दशरथ नद रामचद जू को
आनद को कद कोसलेस रघुराय है ।

जा दिन परेगो काम जम के जम्सन सो
ता दिन तिहारो काम राम नाम आय है ॥

(14)

साप हर पाप हर कलि के कलाप हर
तीखन त्रिताप हर तारक तरैया को ।
कहै पद्माकर त्यों प्रगट प्रवासमान
पापक पियूप ऐसा त्रसे कामगैया को ।
मुख सुखदायक महायक सबन सूधो,
सुलभ सरय सरनागत अवैया का ।
मीठो, भर कठवति परत न फीको नित
नीको निरदोष नाम राम रघरैया को ॥

(15)

आयो मन हाथ तब आइबा रह्यो न कछु
भायो गरु पान फेरी भाइबो कहा रह्यो ।
कहै पद्माकर सुगध की तरग जैसे
पायो सतस फेरि पाइबो कहा रह्यो ।
दान बल बानबल विविध बितान बल,
छयो जस पूज फेरी छाइबो कहा रह्यो
ध्याया राम रूप तब ध्याइबा कछु न रह्यो,
गायो राम नाम तब गाइबा कहा रह्यो ॥

(16)

जोर सब सग सापनो है, जग आपनो एक हितु रघुराया ।
ताहि न भूनिहु भूलियो तू पद्माकर पखनो पेख पराया ।
तन मुँदे प जहाँ कि तहाँ जकि-सी रहि जाति जमाति थी भाया ।
माया चलाय चले कयो चल, चलै आपने सग न अपनी काया ॥

(17)

यो मन तालचो लालच मे लगि,
 लोभ तरगन मे अग्याह्यो ।
 त्यो पद्माकर गेह के दह के
 नेह के काज न बाहि सराह्यो ॥
 पाप किये प न पातकि-पावन
 जानि क राम को नेह निबाह्यो ।
 चाह्यो भयो न बछू कबहू
 जमराज हूँ सौ वृथा वर विसाह्यो ॥

(18)

एकन सा बैर करि प्रीति करि एकन सौ
 एकन सो बैर है न प्रीति बछू गाढी ह ॥
 यहै पद्माकर न होत चित चाही बात
 बात करिय को अनचाही बीच ठाढी है ।
 ऐते प न चेत फेरि केते बाघ बाघत है
 दत लाग हिलन सपेद भई दाढी है ।
 बाढी कहूँ भगति न राम की हिय म देखी
 तृसना विसासिनि या विलई ते बाढी है ॥

(19)

या जग जीवन वा है यहै फल
 जा छन छीढि भज रघुराई ।
 सोधि क सत महतन हूँ
 पद्माकर यात यहै ठहराई ॥
 ह्य रहि हानि प्रयास बिना,
 अनहानि न ह्य सक काटि उपाई ॥

जो विधि भाल ग लीकि लिखी
सो बढाइ बढै न घट न घटाई ॥

(20)

बाहे को बघम्वर का ओढि करु अडम्वर,
बाहे का दिगम्वर ह्वै दूब खाय रहिय ।
कहै पदमाकर त्यों काय के बलेस नित,
सीकर सभित सीत बात ताप सहिये ।
काहे को जपोगे जप बाहे को तपोगे तप,
काहे को प्रपच पचपावक मे दहिये ।
रन दिन छाठो जाम राम राम राम राम
सीताराम सीताराम सीताराम कहिय ॥

(21)

रे मन साहसि साहम राख सु साहस सो सब जेर फिरैगे ।
त्या पदमाकर या सुख म दुख त्यो दुख म सुख मेर फिरगे ।
वैस ही वेणु बजावत श्याम सुनाम हमारि हू टेर फिरैगे ।
एक दिना नहि एक दिना कबहू फिर वे दिन फेर फिरगे ॥

(22)

आवत गलानि जा बखान करी ज्यादा यह
काया मल मून और मज्जा की सलीती है ।
कहै पदमाकर जरा भी जागि भीजी तब
छीजी दिन रैन जैसे रेनु ही की भीती है ।
सीतापति राम के सनेह बश बीती जो प
नौ तो दिव्य देह जम जातना ते जीती है ।
रोती राम नाम त रही जो बिन काम ती या
खारिज खराब हाल खाल की खलीती है ।

(23)

आस बस डोलत सु या को बिसवास कहा
 सास बस बोले मल मास ही को गोला है ।
 बहै पदमाकर छनभगुर सरीर यह
 पानी कसो फेंक जसे फलक फफोला है ।
 करम करोरा पच तत्त्वन बटोरा फेरि
 ठौर ठौर जोला फेरि ठौर ठौर पोला है ।
 छोड हरिनाम नही पैंहैं बिसराम अरे,
 निपट निक्काम तन चाम ही को चोला है ।

(24)

को किहि को सुत को किहि को पितु
 को किहि को पति कौन की कोती ।
 कौन को को जग ठागुर चाकर,
 को पदमाकर कौन को गाती ।
 जानकी जीवन जानि यहै
 तजि दे तू सब धन धाम औ घोती ।
 ही तो न लाटत लोभ लपेट में,
 पेट कि जो प चपेट न होती ॥

प्रकृति-घणन

(1)

पात बिन कीह ऐसी भाति गन बसन ब
 परत न कीहे जे य लजरत सुञ्ज है ।
 बहै पदमाकर बिसामी या बसत ब सु
 एम उनपात गात गापिन ब सुञ्ज है ।
 ऊया यह सूया या सग्गी बहि दाजो भनो
 हरि सों हमारे ह्य न पूल बन बुज है ।

विशुक गुलाब वचनार औ अंनारन की,
 डारन पै डोलत अगारन के पुज है ॥

(2)

बूलन मे केलि म कछारन म कुजन म
 ब्यारिन में कलिन कलीन किलकत है ।
 कहे पदमाकर परागन म पौनहू म,
 पालन मे पिक मे पलासन पगत है ।
 द्वार मे दिशान मे दुनी मे देश देशन मे,
 देखो दीप दीपत म दीपत दिगत है ।
 वीथिन मे ब्रज मे नवलिन मे बेलिन म
 वनन मे वागन मे बगरो बसत है ॥

(3)

ऐ ब्रज चन्द्र चलो विन वा ब्रज सूक बसत की ऊकन लागी ।
 त्यो पदमाकर पेखी पलासत पावक सी मनो फूकन लागी ।
 वै ब्रजनारि विचारि बधू बन बावरि ली हिय हूकन लागी ।
 कारि कुरूप कसाइन पै सु बुद्ध बवलिया बूवन लागी ॥

(4)

मल्लिकान मजुल मलिन्द मतवारे मिले
 मन्द मन्द भारत मुहीम मनसा की है ।
 कहे पदमाकर त्यो नादत नदीन नित,
 नागर नवलिन की नजर निशा की है ।
 दौरत दररे दत दादुर सुदूदे दीह
 दामिनी दमकनि दिसनि मे दशा की है ।
 बहलनि बुदनि बिलोकी बगुलानि बाग
 बगलानि बेलिन बहार बरसा की है ।

वीररस

(1)

सोहै अज ओढे जे न छोडे सीम सगर की
लगर लगूर उच्च ओज के अतकाम ।
बहै पदमाकर त्यो हुकरत फुकरत
फला फलात फाल बाघत फलका मे ।
आगे रघुवीर के समीर के तनै के सग,
तारी द तडाक तडातड तमका म ।
सवा दै दमानन का ढका दै सुबका वीर
ढका दै बिजे को कपि कुद परपो लका मे ॥

(2)

जाही ओर मोर पर घोर घन ताही घोर
त्रोर जग जालिम को जाहिर ।दघात है ।
बहै पदमाकर अरीन की असाई पर
माहब मयाई की ससाई सहरात है ।
परिष प्रचड समू हरपिन हापी पर
दघत बात सिंह माघव का गात है ।
उदन प्रमिद्ध जुड जीनि ही ब मोदा हिन
रोदा टनकारि तन हीदा म न मान है ॥

(3)

तीम तगबाही जे गिमाही बड पावन वै
ग्याही बड अमिन छरिदन को तम प ।
बहै पदमाकर निमान बड हापिन वै
पूरि पार बड पावगावन व भीन वै ।
गात्रि बनुरत समू अग जोतड व हनु
क्षिमत बहादुर बडन कर पन वै ।

लाली चट्टे मुख पै, वहाली चट्टे ग्राहन प
 काली चट्टे गिह प कगानी चट्टे वन प ॥

दानवीर

(1)

सम्पति सुमेर की कुबेर की जु पावै ताहि
 सुरत लुटावत विलख उर धारै ना ।
 कहै पदमाकर सुहेम हय हाथिन के
 हलने हजारन के त्रितरि बिचारै ना ।
 गज गज वक्स महीप रघुनाथ राव
 याही गज धोखे कह्ये काहू देइ डार ना ।
 याही डर गिरिजा गजानन को गोई रही,
 गिरि तें गरे तें निज गोद तें उतार ना ।

(2)

यकमि बितु ड दय झुण्डन क झुण्डु रिपु
 मुण्डन की मानिका दई ज्यो त्रिपुरारी को ।
 कहै पदमाकर करोरन को काप दय
 पोडम हू दीह महादान अधिकारी को ।
 ग्राम दये धाम दये अमित अराम दये
 अन्न जल दीह जगती य जीवधारी का ।
 दाता जयसिंह दोग बात ती न दीन्ही कहू
 बरिन का पीठ और डीठि परनारी को ॥

गगा-स्तथन

(1)

विधि के कमडल की मिडि है प्रसिद्ध यही -
 हरि पद-पकज प्रताप की लहर है ।

कहै 'पदमाकर' गिरीस सीम मडन के,
 मुडन की माली ततवाल अघहर है ।
 भूपति भगीरथ के रथ की सुपुण्य पथ,
 जहू जप जाग फन फल की फहर है ।
 छेम की छहर गगा रावरी लहर
 बलिवाल की बहर जमजान की जहर है ॥

(2)

कैधा तिहू लोव की सिगार की बिसाल माल
 कधीं जगी जग मे जमाति तीरथन की ।
 कहै 'पदमाकर' विराजे सुर सिंघु धार
 कधीं दूध धार कामधेनुन क थन की ।
 भूपति भगीरथ के जम की जलूस केधी
 प्रगटी तपस्या कैधा पूरी जहू जनकी ।
 कैधी कछू राख राका पति सा इनाका भारी,
 भूमि की सलावा क पताका पुंयगन की ॥

(3)

जम को न जोर जब पापिन प चल्यो तव
 हाथ जोरि गगा जू सो चुगली करे खरे ।
 बडेन प ढरी प ना ढरो देखि तुच्छन प
 कहै पदमाकर सुनावत हरे हरे ।
 बडेन प ढरे बडी पाइय बडाई दखो
 इस प ढरी तो नुम्हे ईस सीस प ढरें ।
 तुच्छन को देती जैसो नारायन रूप तसो
 तुच्छ तुम्हे तुच्छ करि पावन तरे धर ॥

(4)

करम को मूल तन तन मूल जीव जग
 जीवन को मूल अति आनंद ही धरिवो ।

कहै 'पदमाकर ज्यो आनन्द को मूल, राज
 राजमूल केवल प्रजा का मीन-परिवार
 प्रजामूल अन मत्र अनन को मूल मेध,
 मेधन को मूल एक जज्ञ अनुसरिग ।
 जज्ञन को मूल धन धन मूल धम अरु
 धम मूल गगा जल बिन्दु पान करिबो ॥

(5)

आस करि आयो हुता मैया पास रावरे मैं,
 गाढ हू के पास दुख दूरि बुटि बुटिग ।
 कहै पदमाकर बुरोग से सघाती तेऊ
 गल मे चलत घूमि घूमि घुटि घुटिगे ।
 दगादार दोष भीह दारिद बिलाइ गये
 फिकिर के फद बिन छार छुटि छुटिगे ।
 जो जो आउं-आउं तरे तीर पर गगा ती लो,
 बीच ही म मेरे पाप पुज लुटि लुटिगे ॥

(6)

जमपुर द्वारे लगे तिनम केवारे कोऊ,
 हैं न रखवारे ऐस वन के उजारे हैं ।
 कहै पदमाकर तिहारे प्रन धारे तेउ,
 करि अघ भारे सुरलोक मे सिधारे हैं ।
 सुजन सुखारे करे पुण्य उजियारे अति
 पतित क तारे भव सिंधु तें उतारे हैं ।
 काहू ने तारे तिहे गगा तुम तारे, और
 जेते तुम तारे तेते नभ मे न तारे हैं ॥

(7)

सुखद सुहाई मन भाई मुनि देवन के
 निखिल निवाई रूह वेदन मे गाई है ।
 कहै पदमाकर' कहीं लीं साधुनाई कही
 सब ही पै एकसी दया-सी बगराई है ।
 पु-यताई भारत उघारन जघमताई
 नीक ठकुराई की ठसक ठहराई है ।
 जहा जहा जम की जमाति की-ही बरामाति
 वहा तहा फिर देखि गगा की दुहाई है ॥
 (गगलहरी से)

सूर्यमल्ल मिश्रण

वीर के प्रतीक

1 सिंह

१

निधडक, सूतो केहरी, तो भी विमुहा पाव ।
गज-गडा घोर न घर, बच्च पढ बघ—वाव ॥

२

पग पाछा, छाती घडक, कालो-पीलो दीह ।
नेण मिच साम्हो सुणे कवण हकाल सीह ?

३

हेली ? घर घर को हुव, पू चा छक पैगाम ?
हायी हायल आहण, नाहर जिए री नाम ॥

४

खोयो मैं घर मे अवट, बायर जबुक काम ।
सीहा केहा देसडा, जेय रहे सो याम ॥

५

जिए वन भूल न जावता, गैद गवम गिडराज ।
तिण वन जबुक ताखडा, ऊधम मड आज ॥

६

डोह गिड वन वाडिया, द्रह ऊडा गज दीह ।
सीहण नेह सकक वो, सहल मुलाणो सीह ॥

2 वराह—

७

तुडा गज, फेटा तुरी, डाढा भड प्रीभाड ।
हेकए कवल घुँदिया, फौजा पापर पाड ॥

८

पूरा आकुल पाठडा, माला पडता भार ।
हेकए कवला बाहिरा, भाडा भाडा डार ॥

९

सुहडा प्रौर सिकारसो, मन म पा न समाय ।
माला ॐ गिड भाजमी, डाढा प्रलय दिनाय ॥

3 नाग—

१०

बाबी भीतर पोडियो, कालो दबक काय ?
पू गी ऊपर पाधरो आव भोग उठाप ॥

4 धवल (बैल)

११

धवल पयप रे धणी ! की दुमगो घण भार ?
ओडे घर रो आवगो, कए पहाडा पार ॥

वीर के लक्षण

१२

धल लोध जण जण बहै, कस बधि करवाल ।
परलभ डा अर कायरा, अहूअहियाँ अवाल ॥

१३

रुड हुवा जीवै जिके, सदा न हेर साथ ।
सोही र गल साबलै, वै भड धान हाय ॥

१४

रण पासे दु-मनो रहै, साज न नए समाय ।
पग नगर पाछा दियए, सो दानत बहाय ॥

१५

बिण माथ बाढे दला, पोढ करज उतार ।
तिण मूरा रो नाम ले, भद बधि तरवार ॥

१६

सीह न धाजो ठाकुरा । दीन गुजारो दीह ।
हाथल पाढे हाथिया, सो भद वाज सीह ॥

१७

सूता नाहर-माग्वा, सात न छोड सूर ।
कत ! विणट्टा बाच-सा, दो ही विलसा दूर ॥

घोर घोर मातृभूमि

१८

मूता घर-घर बाग्वा कृष्ण शक्ति वर ।
साग घारा बापा-भय, दरे घटका दम ।

१९

साटी कुल री गोवला, नेप घर घर नीर ।
रसा क्यारी रावता ! बरती को ही वीर ॥

वीर माता

हूँ बलिहारी राणियाँ, भ्रूण सिखावण भाव ।
नालो बाढण री छुरी, भपट जणियो साव ॥

२५

हूँ बलिहारी राणियाँ, साचा गरभ सिन्धाय ।
जाचा हूँ तापण, हरल धी द्रिग साय ॥

२६

हूँ बलिहारी राणिया, जाया बस छतीस ।
सर सलूणो चूण न, मोल समर पै सीस ॥

२७

हूँ बलिहारी राणिया, धान बजाण धीह ।
वीद जमी रा जे जण, साकल टीढा सीह ॥

२८

इला न देणी भाप री, रण-खेता भिड जाय ।
हालरिया हुलराय, मरण-बडाई माय ॥

२९

बाला ! चाल म वीमरे, भो धरण जहर समाण ।
रीत मरता डील की, ऊठ, धियो घमसाण ॥

वीर सास

३०

भाज घरे सासू ? कहे, हरल भ्रवानक बाय ?
बहू बलेवा हूलसै, पूत मरेवा जाय ॥

३१

सुण मरियो सुत हेकलो, सासू प्रभण धार ।
भो जाणियो कायर धयो, बटी ! बलण निवार ॥

३२

सुत धारा रज रज धियो बहू बलेवा जाय ।
सखिमा डू गर साज रा सासू उर न समाय ॥

घोर पत्नी

३३

नह पढोस कायर नरा, हेली । घास मुहाय ।
बलिहारी जिण देग, माया मोल विकाय ॥

३४

घण नू भालगसी घणी । मुणिया बागो मार ।
हालीज उण दसड, प्राणा-रा व्योपार ॥

३५

कायर-नारा मौन-दुख, रोक वासम गेह ।
घारा भ्रजको मो घणी, भला लगाड देह ॥

३६

कत । लखीज दोय कुल, नपी फिरती छाह ।
मुडियां मिलती गीदबो, मिल न घण-री बाह ॥

३७

पूजाणो गज मोतियां, भीडालो गर मूक ।
बीजाणो पण चामरा है चूडो बल सूक ॥

३८

तन दुरग, घर जीव तन कइणो भरना हक ।
जीव दिगट्टां जे बड़ो, नाम रहीजै नेक ॥

३९

बलण घरेयां विम बण जीव लगय जीव ।
ब न्न जो कायर बणो, पोहर भेजो पीव ॥

४०

कायण ! भ्राज न मांड पण, बाहू सुणीज जण ।
घारां मागे जे घणी, तां राज पण रण ॥

४१

विण करियां, बिल जोनियां, ज घब घाब घाम ।
पद-पद पूरो पाण्डू, सो राबन-री काम ॥

वीर बालक

४२

रण सेती रजपूत री, वर न भूल बाल ।
बारह वरसां बाप-रो, लहै वर लकाल ॥

४३

श्रीर मुवा मुण भोहडे, वरसा पाध विचाल ।
घर-भे मायड घातियो, बटक् पूचा बाल ॥

४४

बुल धारो रण-पौटण, मो नू कहती माय ।
प्राणा गाह्व पेखिया, बजियो वरज बाय ?

४५

मन सोचे जाणो मती मो नू बालक माय ।
वर पराया बाहुड, जठ न घर-रा जाय ।

४६

बाप गयो ले माहेरो काको जात कडू व ।
तोय मचायी छोकर, वरी र घर बू व ॥

४७

भोला जाणो मूलिया, वरसा आठा बाल ।
श्रेय धराणें सिवणी, कबर जणें सो काल ॥

वीर पति

४८

आक-पलासा भूपडो, देवें कीष न हत ।
हिये न तो भो ऊतर कोस लुमाव कत ।

४९

टोट सरका भीतडा, घाते ऊपर घास ।
वारोज भड-भूपडा, अधिपतिया घावास ॥

५०

इसड टोट हूँ सखी । वारी बार भनत ।
पोत जणी मे मातियां चूडो मैगल दत ॥

५१

किए दामां बिजस मदा, दामा दुरलभ नाग ।
याय भडां घर नारिया, चूडो-पात सुहाग ॥

५२

पहल मिले धए पूछियो किए कीघा किए हृष्य ?
बीजड साहे नारिया, इण डाकण भ अघ्य ।

५३

पेटी मोड छिपाविया, जा रण घाव न जीव ।
हेली ! दिवसां पाहुणो, पडव दीठो पीव ॥

५४

गोरण दिन सूती सखी !, बागा टोल विहास ।
बाह उसीसो खीबियो, जागी पटक निसास ॥

५५

बाय कसासी ! छल बियो, सज गुमावण रग ।
पूस दुवार छाबिया चीत खीगुण जग ॥

५६

मद लेता भाई मती, भोली । चायुक भात ।
छबियो साखां छगिसी, खाती डाहल सात ॥

५७

बिग दिन देगु बाटडो घाता पडवै सूभ ?
पाव भरनां घाव गी बीना जावरु मूभ

५८

हेली ! पीवर देगिया, येकण रात मुहाग ।
पर भामां परल जासिया दूगणुण दुहाग ॥

५९

दिन दे देगु सूभयो, निम घावा बरहाय ।
बडो न दुगो गोट भर, हेनी ! इण घर घाय ॥

६०

पहर चवत्थ पीडियो, गिगतो फीज गरीब ।
धेव घडी अक जीभ-नू, बरा भाए नकीब ॥

६१

भामी ! देवर नीद-धस, धोलीन न उताल ।
चगतां घावा चंबसी, ज सुणसी बवाल ॥

६२

घोरपिया सूतो धणी, कुरलै चकवी ! काय ? ।
देखीजै मुख दीह र, सुय दो जाम सवाम ॥

६३

वरी-वाड वासडी, सदा खणक खाग ।
हेली क दिन पाहुणो ऊडा भाग मुहाग ? ॥

६४

मतवासो जीवन सदा लूभ जबाई माय ! ।
पाडया घण पहली पडै बूढी घण न मुहाय ॥

६५

घर-घर चर विसाविया दिन दिन लू बै घाड ।
हेली ' ! मो घव टेक्लो, जड न घाम किवाड ॥

युद्ध भूमि को प्रस्थान

६६

ऋडा धोछाड गमण, वसुधा पाड वाह ।
तो भी तोरण-वीद तिम, धीरो धीरो नाह ॥

६७

दाज कुमत विसासतो, धीम वेग घपाय ।
भामी ! तोरण वीद जिम, जोवी, देवर जाम ॥

६८

देवर भामी ! देखणो, डाहण गज-नीसाण ।
सोकरडा रा सि-धु म, पूगो पवन प्रमाण ॥

६६

क दीठो ह्य भ्रावतो, कं दीठो भर-फौज ।
हेली ! कवण सिखावियो, उडणो उडणो भोज ? ॥

७०

पुद्ध का आरम्भ

सपेसे वाल्हा सगा, मिल गल-बध्या मार ।
पहली बाहण पाहुणा, मडीज मनुहार ॥

७१

तोषा घर दरजा पडे, झड गिरा मिर झाट ।
जाण सागर सीर—रै, मदर रो घरडाट ॥

1 शेषनाग

७२

नाग ! द्रमका की पड ? नागज ! घर मचनाय ।
इण रा भागणहार जे, साज मिडाणा भाय ॥

2 ककणी

७३

बाय उताली ककणी ! जे मद पीवण जेज ।
कत सपण हेकसो कटका ढाहि कसज ॥

3 योगिनी

७४

जोगण ! पहली घाय पल, करे उतावल काय ? ।
भर सप्पर वाल्हे रुधिर, देमी कत थपाय ॥

७५

बाणी ! पील कडाह मे, की सप्पर तो हूप्य ? ।
हेर साव पवाहडी, मावे दल गज मप्य ॥

4 महादेव

७६

ईग ! पणा जे घागता, तो सीज गिर झोड ।
भइ केकल पण रो पणा, पडसा कर बहोड ॥

६०

पहर पहरप पीड़ियां, गिणती फीज गरीब ।
घेक पटी बक जीम-नू, बरा भाण नकीब ॥

६१

भाभी । देवर नीद-बस, बोलीन न उतास ।
पगतां पावां चैकसी, ज सुणणी बवाल ॥

६२

धीरपियां मूतो धनी, कुरस चकवी ! काय ? ।
देतीजें मुस दीहर, मुस टो जाम सवाय ॥

६३

यरी-वाढ वासडी, सदा गणन खाग ।
हेली क दिन पाहुणो, ऊडा भाग सुहाग ? ॥

६४

मतवालो जीवन सदा तूभू जबाई माय । ।
पडिया परण पहली पढे, बूढी घण न सुहाय ॥

६५

घर घर घर विसाविमा, दिन दिन लूबै घाड ।
हेली '। मो भव टेकतो, जड न धाम विवाड ॥

युद्ध भूमि को प्रस्थान

६६

झडा घोछाड गमण, बसुषा पाडे वाह ।
तो भी तोरण-बीद तिम, धीरो धीरो नाह ॥

६७

बाज कुमत विसासतो, धीम वेग घपाय ।
भाभी ! तोरण बीद जिम, जोबी, देवर जाय ॥

६८

देवर भाभी ! देखणा, ढाहण गज नीसाण ।
सोकरडा रा सि घु मे, पूगो पवन प्रमाण ॥

६६

कै दीठा ह्य आवता, कै दीठा परफोज ।
हेली ! कवण सिम्बावियो, उडणो उडणो भाज ? ॥

७०

युद्ध का आरम्भ

सपेखे वाल्हा सगा, मिल गल-वप्पा मार ।
पहली वाहण पाहुणा, मढीज मनुहार ॥

७१

तोपा घर दरजा पडे, झडै गिरा मिर भाट ।
जाणै सागर खीर—रे, मदर रो घरडाट ॥

1 शैवनाग

७२

नाग ! द्रमका की पडे ? नागण ! घर मचकाप ।
इण रा मागणहार जे, भाज मिडाणा भाय ॥

2 ककणी

७३

काय उताली ककणी । जे मद पीवण जेज ।
कत समर्पे हेकसो कटका वाहि कसेज ॥

3 योगिनी

७४

जोगण ! पहली साय पस, करे उनायम काय ? ।
मर गण्णर वाल्हे दधिर, दमो कत सपाम ॥

७५

नामो ! पीत रुडाह से, की राप्पर तो हृत्थ ? ।
हेक साय पपाहडी, माव दस गत्र मध्य ॥

4 महादेव

७६

ईम ! परा ज आवता, तो मीत्र मिर छोड ।
पड देकरा परा रो परा, पडमो कर बहोड ॥

युद्ध वर्णन

देख सखी ! होली रम, फौजा में घब घनेक ।
साजर मदर सारखो होहै घनड घनेक ॥

७८

देख सहेली ! मो घणी, बजको वाग उठाव ।
मद-न्याला जिम घेकसो, फौजा पीवत जाव ॥

७९

पग पग थटिया पाहुणा, खागा सहणी खात ।
पीव परूसै पात-मे, मूल केन दुमात ? ॥

८०

सेजा मे घर घर सखी ! आण घजर भजाण ।
घारा मे राख घजर, सो कुरा कत समाण ? ॥

८१

मूरु अचभो हे सखी ! कत बखाणुं कीस ? ।
विण माथ वाढ दला, घालि हिये क सीस ? ॥

८२

की हेली ! अचरज कहूँ कत घणी र काज ? ।
भच घधूरे मावतो, घालि न माव घाज ॥

८३

करडरो कुच नू मासता पढवा हदी खोल ।
घब पूला जिम आगम, सेला री घमरोस ॥

वीर द्वारा शत्रुओ का विनाश

८४

होव घर घर हाय रे ! रोके बर-बर नार ।
भाभी ! देबर-नू कहो, घब तो रोस उतार ॥

भाभी ! हेकरे वर मे, बोलविया दस-बीस ।
भ्रम तो देवर ओहूढो, सच भार न सीस ॥

भाटो सामू ? भाप रो सो लेबो कुल मार ।
जायो वरजो, जगत रा, भाटा तियण उघार ॥

ईसो, घर-घर ऊतरं, चूहा भूसण चीर ।
दया न माने दियणो, वाई ! था रो वीर ॥

शत्रुघ्नो की पराजय

पेर सहैसी ! पार रा, भडा गिए न रहाय ।
धेकरे भाण उतारिया, जाए सिगडी जाय ॥

दीपा दिस दिस सू बिया, ऊठे कत भजाय ।
भू भकरण रा भाडिया, जाए वदर जाय ॥

विजयी पति का आगमन

होल वरज मय भेज घर घर मानर मु धाम ।
पावा कत पधारिया पोवा हत प्रणाम ॥

• ('वीर सतसई' से)

×

×

×

शमशेर बहादुर सिंह

उषा

प्रातः नभः या बहुत नीला शख जसे
भोर का नभ

रात से लीपा हुआ चौका
[अभी गीना पडा है]

बहुत काली सिल जरा से लाल केसर से
कि जसे धुल गयी हो

स्लेट पर या लाल खडिया चाक
मल दी हो किसी ने

नील जल मे या किसी को
गौर झिलमिल देह
जसे हिल रही हो

भोर

जादू टूटता है इस उषा का भव
सूर्योदय हो रहा है ।

सींग और नाखून

सींग भोर नाखून
साह के बबतर कथों पर ।

सीने मे सुराल हठी का ।
भाँसों मे पास-काई की नमी ।

एक मुर्दा हाथ

पाव पर टिका

उलटी कलम घामे ।

तीन तसली मे कमर का घाव सड चुका है ।

जडो का भी कडा जाल

हो बुका पत्थर !

भुवनेश्वर

न जाने कहीं किस सोच में आज, जाने किस
सदाग्रत का हिमाचल बैठे तुम लिख रहे होगे (अपनी
बसो मे ?)—जहाँ पता नहीं प्राप्त भी होगा
तुम्हें कौरी घाय या एक हरी पुटिया का बल
भी ?.... हिसाब, मसलन ताडी बितन
की ?—बितने की देसी ?—और, रम ?
बितनी अधिक-अधिक, बितनी कम से-
कम ? बितनी असली, बितनी ।

(इंसान रोटी पर ही जिंदा नहीं इस
सच्चाई को धीर बितने अपनी बडई मुम्नुराहट
मरी भूम बे आदर महमूस किया होगा
एक तपते पत्थर की तरह, भुवनेश्वर
बितना कि तुमने !)

गजल

(1)

जी को लगती है तेरी बात खरी है शायद
 वही शमशेर मुजफ्फरनगरी है शायद
 आज फिर काल से लौटा हूँ बडी रात गये
 ताक पर ही मेरे हिस्से की धरी है शायद
 मेरी बातें भी तुझे खाबे-जवानी सी हैं
 तेरी आँखो मे अभी नीद भरी है शायद

× × ×

एक कलम है और सी मजमून ह,
 एक कतरा खूने दिस तूफान है ।

(2)

वही उम्र का एक पल कोई लाए
 तडपती हुई सी गजल कोई लाए

 हकीकत को लाए तख्तुल से बाहर
 मेरी मुश्किलो का जा हल काइ लाए

 कही सद खूँ मे तडपती है बिजली
 जमाने का रद्दोबदल कोई लाए

 उसी कम निगाही को फिर सीपता हूँ
 मेरी जान का क्या बदल कोई लाए

 दुवारा हमे होश आए न आए
 इशारो का भीका महल कोई लाए

 नजर तेरी दस्तूरे फिरदौस लायी
 मेरी जिदगी मे क्षमल कोई लाए

(3)

जहा मे अब तो जितने रोज
अपना जीना होना है,

तुम्हारी चोटों होनी हैं
हमारा सीना होना है ।

वो जल्वे लोटते फिरते हैं
खाको खून इसाँ में

तुम्हारा तूर पर जाना
मगर नाबीना होना है !*

कदमरजा है सूए बाम
एक शोखी कयामत की

मेरे खूने हिना परवर से
रगो जीना होना है !

वो कल भायेंगे वादे पर
मगर कल देखिए नब हो !

गलत फिर हजरते दिन,
घापका तह मीना होना है ।

वग ऐ शमशेर, चल कर,
अब कही उजस्ततगजी हो जा—

कि हर शीरो वो महफिस में
गदाए मीना होना है ।

* यह मिसरा मेसक के मामा ह्य० बाबू स*

(4)

ईमान गडबडी मे है दिल के हिसाब मे !
 लिक्खा हुआ कुछ और मिला है किताब मे !

दिल जिनमे दूँढता था कमी अपनी दास्ता
 वो सुखियाँ कहां है मुहब्बत के बाब मे !

ए दिलनेवाज ! पहलू ही जब दिल के और हो,
 क्या खिलवतो मे लुत्फ, धरा क्या हिजाब मे !

उस आस्ताँ तक हमको बहारो मे ले के जाओ,
 जिस पर कोई शहीद हुआ हो शबाब मे !

ध्रमन का राग

सच्चाइयाँ

जो गंगा के गोमुख से मोती की तरह बिलरती रहती हैं
हिमालय की बर्फीली चोटी पर चाँदी के उन्मुक्त नाचते
परी में झिलमिलाती रहती हैं
जो एक हजार रंगों के मातियों का खिलखिलाता समदर है

उमंगों से भरी फूलों की जवान कश्तियाँ
कि बसंत के नये प्रभाव सागर में छोड़ दी गयी हैं ।

ये पूरब पश्चिम मेरी आत्मा के ताने बाने हैं
मैं न एशिया की सतरंगी किरनों को अपनी दिशाओं के
गिद

लपट लिया

और मैं यूरोप और अमरीका को नम आँच की धूप छाँव
पर

बहुत हीले हीले नाच रहा हूँ
सब सस्कृतियाँ मेरे सरगम में त्रिमोर हैं
क्योंकि मैं हृदय की सच्ची सुख शांति का राग हूँ
बहुत भादिम, बहुत अभिनव ।

(‘कुछ और कविताएँ से)

बात बोलेगी

बात बोलेगी,
हम नहीं ।
भेद खोलेगी
बात ही ।

सत्य का मुख
भ्रू की आँखें
क्या देखें ।

सत्य का रुख
समय का रुख है
अभय जनता को
सत्य ही मुख है,
सत्य ही मुख । ।

दैत्य दानव,
भीषण, क्रूर
स्थिति, कगाल
बुद्धि, घर मजूर ।

सत्य का
क्या रंग है ? —
पूछो
एक सग ।

एक—जनता का
दुःख एक ।
हवा में उड़ती पताकाएँ
घनेक ।

दैत्य दानव । क्रूर स्थिति ।
कगाल बुद्धि मजूर घर भर ।
एक जनता का—अमर वर
एकता का स्वर ।
—अथवा स्वतन्त्र-इति ।

प्रेम की पाती

(घर के बसगता के नाम)

1

कौन के पीतम, कौन की पाती !

घास लगाये दीया न बाती !

घो मेरे साईं और मेरे ईश्वर
तेरा ही नाम भव प्रानो की घाती !

होली का भय, दीवाली का घ्रातक

ईद मुहरम, एक ही भाति !

पव के दिन और ऐसे भयानक
छलनी छलनी रे देश की छाती !

प्रेम के सगी, धम के सायी

ऊँघ गये सब सग-सगती !

काले बाजार मे धम की दुल्हन
कैसे ये दूल्हा ! कैसे बराती !

हिंदू कि मुस्लिम सिख कि इसाई

भारतवासी कौन एक जाति !

2

कौन पठायी किने रे बाँची

प्रेम की पाती साँची रे साँची !

मैं तो न जानूँ उद्द कि हिंदी
प्रेम की बानी साँची रे साँची !

तीन शेर

सिखा है मुकद्दर मे दर-दर की दुआ मांगो !
सय्यर-मह ओ मह र ओ ग्ररतर की दुआ मांगो !

इसान के पर्दे मे रूठा है खुदा हमसे
इस घर की दुआ मांगो, उस घर की दुआ मांगो !

फिर सुख निशाँ बनकर काँधे पे उठे तनकर
जो सर है हथेली पर उस सर की दुआ मांगो !

(‘उदिता’ से)

घो मेरे घर

घो मेरे घर

घो हे मेरी पृथ्वी

साँस के एवज तूने क्या दिया मुझे

—घो मेरी माँ ?

तूने युद्ध ही मुझे दिया

प्रेम ही मुझे दिया क्रूरतम कटुतम

घौर क्या दिया

मुझे भगवान् दिये कई-कई

मुझसे भी निरीह मुझसे भी निरीह ।

और अद्भूत शक्तिशाली मकानोकी प्रतिमाएँ ।

ऐसी मुझे जिन्दगी दी

ओह

खाँखे दी जो गीली मिट्टी का बुदबुद सी हैं

घौर तारे दिये मुझे अर्नगिनती

साँसो की तरह

अर्नगिनती इकाइयो मे

मुझसे लगातार दूर जाते

मौत की व्यथ प्रतीक्षाओ से ।

घौर दी मुझे एक लम्बे नाटक की

हसी

फँसी हुई

दशकशाला के इस छोर से उस छोर तक

लहराती कटु क्रूर ।

फिर मुझे जागना दिया, यह कहकर कि
 लो और सोओ !

और वही तलवारें घड़े की
 प्रतिम लोरिया के बजाय !

इसान के झंझोटे में डालकर
 सब-कुछ तो दे दिया,
 जब मुझे भरे कवि का बीज दिया कटु तिलक !

फिर एक ही जन्म में और क्या क्या
 चाहिए !

(‘इतने पास अपने स

अकाल

भूख

भनाज

मुनाफाखोर का

भनाजखोर का

बिलकुल छिपा सा, निजन मे,

श्रेयरा बाजार

जिसके चारो ओर गवरमेट

ककरीले द्ये लिये दान समितियाँ

घोर भूखी लाशो से दूर,

सूने-सूने से खिचड़ी-रसोइयो वाले,

हम तुम, वे, सब

इस मौनताड्य के चारो ओर

असहाय से चक्कर लगा रहे हैं,

समझ नहीं पा रहे हैं

कुछ सोच तक नहीं पा रहे हैं,

केवल कुछ कर पा रहे हैं ऐसे

कि मानो कुछ कर पा नहीं रहे हैं

मृत्यु का यह नया रूप है स्पष्ट

हमारे जीवन के बीच

लय ध्वनि स्वर-सन्केत और सज्ञा से हीन

अभूतपूर्व ।

दुश्मन के सीने में
 विजय का निश्चित भी तीर हम,
 खुली-खुली शोषणी घाँसा के द्वार पर प्रहरी,
 घोड़ी की रस्सियों पर लटकी
 सूखती चोलियों के-से स्तनों की
 साज रखने बाल हम
 तेल की दुकान पर बंधी लटकी
 भिल्ली की बुपियों के से
 रुड मुड छोटे छोटे
 असह्य बाल-समूहों के पापक हम,

उन्नत मस्तक भारतवासी
 अपने ही दीघ निर्घोषों से मानो
 मारवाड का मरुवातावरण कपित कर देंगे हम,
 भाज मरना सीख रहे हैं

इस मूक शात युद्ध में,
 अपनी शत्रु भयविहीन सबको और गलियों में
 जहाँ कुत्ता का जीवन भी दीघनर लगता है,
 स्पृहणीय, केवल
 अपना ही दयनीय ।

क्यों जन्मा था मनुष्य
 बीसवीं सदी के मध्यान्ह में
 धो मरने के लिए ?
 भुलसा सा पतझड का पत्र
 चिपडो का बादल सा
 धूमिल सध्याओं में,
 हवा का निरीह कप केवल ।

बीर बलिदान की सदी है यह ।
 हमी उठेंगे क्या ?
 बीर बलिदान की सदी है यह

नानाविध पूरा शक्तिशाली

समृद्ध ?

स्वए इतिहासी के स्रष्टा

हमी बनेगे क्या ?

अखिल उत्पादन के अमर अधिकारी

विष्व राष्ट्रों के सग साभिमान

हमी बढेंगे क्या ?

('चुका भी हूँ नहीं मे' से)

दुष्यन्त कुमार

पुगने पड गए डर, फेंक दो तुम भी,
ये कच्चा आज बाहर फेंक दो तुम भी ।

लपट भाने लगी है, अब हवालो में,
घोसारे और छप्पर फेंक दो तुम भी ।

यहाँ मासूम सपने जी नहीं पाते
इन्हें कुबुम लगाकर फेंक दो तुम भी ।

तुम्ह भी इस बहाने याद कर लेंगे,
इधर दो चार पत्थर फेंक दो तुम भी ।

ये मूरठ बोल सकती है अगर चाहो,
अगर कुछ शब्द कुछ स्वर फेंक दो तुम भी ।

किसी सवेदना के काम आएंगे,
मही दूटे हुए पर फेंक दो तुम भी ।

ये घुए का एक घेरा कि मैं जिसमें रह रहा हूँ,
मुझे किस कदर नया है, मैं जो दद सह रहा हूँ ।

ये जमीन तप रही थी, ये मकान तप रहे थे,
तेजा इतजार था जो मैं इसी जगह रहा हूँ ।

म ठिठक गया था लेकिन तेरे साय-साय था मैं,
तू भगर नदी हुई तो मैं तेरी सतह रहा हूँ ।

तेरे सर पे घूप आईं ता दररुत बन गया मैं,
तेरी जिगदी मे अक्सर मैं कोई वजह रहा हूँ ।

कभी दिल में धारजू-सा कभी मुह में बद्दुआ सा,
मुझे जिस तरह मी खाहा, मैं उसी तरह रहा हूँ ।

मेरे दिल पे हाथ रखो, मेरी बेबसी को समझो
मैं उघर से बन रहा हूँ मैं उघर से ढह रहा हूँ ।

यहाँ कौन देखता है, यहाँ कौन सोचता है,
कि ये बात व या हुई हैजी मैं शेर कह रहा हूँ ।

आज सड़का पर लिये हैं सफ़ाई नारे न देख,
घर घघरा देख तू, आकाश के तारे न देख ।

एक दरिया है यहाँ पर दूर तक फैला हुआ,
आज अपने बाजू घा को देख, पतवारें न देख ।

अब यकीनन ठोस है धरती हकीकत की तरह
यह हकीकत रख, लेकिन सफ़ाई के नारे न देख ।

वे सहारे भी नहीं अब, जग लडनी है तुम्हें,
कट चुके जो हाथ, उन हाथों में तलवारें न देख ।

दिल को बहला ले, इजाजत है, मगर इतना न उठ,
रोज सपने देख, लेकिन इस कदर प्यारे न देख ।

त घुघलवा है नजर का, तू महज मायूस है
रोजनों को देख दीवारा में दीवारें न देख ।

राख, कितनी राख है, चारों तरफ बिखरी हुई,
राख में चिनगारियाँ ही देख, अगारे न देख ।

कहीं पे धूप की चादर बिछा के बैठ गए,
कहीं पे शाम सिरहाने लगाके बैठ गए ।

जल जो रेत में तलुवे तो हमने ये देखा,
बहुत से लोग वही छटपटा क बठ गए ।

खड़े हुए ये अलावो की आच लेने को,
सब अपनी अपनी हथेली जलाके बैठ गए ।

दुकानदार तो मेले में लुट गए धारो ।
तमाशबीन दुकानें लगाके बैठ गए ।

सहू-सुहान नजारो का जिक्र आया तो,
शरीफ लोग उठे दूर जाक बैठ गए ।

य सोचकर कि दररु तों म छाँव होती है,
यहाँ बबूल के साए में आके बठ गए ।

भूख है तो सब कर, रोटी नहीं तो क्या हुआ,
आजकल दिल्ली में है जेरे बहस ये मुद्दा ।

मौत ने तो घर दबोचा एक चीते की तरह,
जिंदगी ने जब धुमा तब फासला रखकर धुमा ।

गिडगिडाने का घहा कोई असर होता नहीं,
पेट भरकर गालियाँ दो, आह भरकर बददुआ ।

क्या बजह है प्यास ज्यादा तेज लगती है यहाँ,
सोग कहते हैं कि पहले इस जगह पर था कुआँ ।

आप दस्ताने पहनकर धूल रहे हैं आग को,
आपके भी धून का रंग हो गया है साँवला ।

इस अंगीठी तक गली से कुछ हवा आने तो दो,
तब तलक खिसते नहीं, ये कोयलें दोगे धुमा ।

दोस्त, अपने मुस्क की बिस्मत्त पे रजीदा न हो,
उनके हाथों में है पिजरा, उनके पिजरे में गुमा ।

इस शहर में वो कोई बारात हो या बारदात,
अब किसी भी बात पर खुसती नहीं हैं सिडकियाँ ।

रेल, दहलीज से काई नहीं जाने वाली,
ये खतरनाक सचाई नहीं जाने वाली ।

कितना अच्छा है कि साँसों की हवा लगती है,
भाग अब उनसे बुझाई नहीं जाने वाली ।

एक तासाब सी भर जाती है हर बारिश में,
मैं समझता हूँ ये ग्वाई नहीं जाने वाली ।

चीख निकली तो है होठों से, मगर मद्धम है,
बद कमरों को सुनाई नहीं जाने वाली ।

तू परेशान बहुत है, तू परेशान न हो,
इन ख_दाओं की ख_दाई नहीं जाने वाली ।

घाज सडको पे चले घाओ तो दित्त बहलेगा,
बद गजलों से तन्हाई नहीं जाने वाली ।

भूख है तो सब्र कर, रोटी नहीं तो क्या हुआ,
 आजकल दिल्ली में है, जेरे बहस ये मुद्दा ।

मौत ने तो घर दबोचा एक चीते की तरह,
 जिदगी ने जब छुआ तब फासला रखकर छुआ ।

गिडगिडाने का यहा कोई असर होता नहीं,
 पट भरकर गालियाँ दो, ग्राह भरकर बददुआ ।

क्या वजह है प्यास जयादा तेज लगती है यहाँ,
 लोग कहत हैं कि पहले इस जगह पर या कुआँ ।

आप दस्ताने पहनकर छू रहे हैं प्राग को,
 आपके भी खून का रंग हो गया है साँवला ।

इस अंगीठी तक गली से कुछ हवा आने तो दो,
 तब तलक खिलते नहीं, ये कोयलें देंगे धुआ ।

दोस्त, अपने मुस्क की किस्मत पे रजीदा न हो,
 उनके हाथा में है पिजरा, उनके पिजरे में सुआ ।

इस शहर में वो कोई बारात हो या वारदात,
 भय किसी भी बात पर खुलती नहीं है खिडकियाँ ।

देख, दहलीज से काई नहीं जाने वाली,
ये खतरनाक सचाई नहीं जाने वाली ।

कितना अच्छा है कि साँसों की हवा लगती है,
भाग अब उनसे बुभाई नहीं जाने वाली ।

एक तासाब सी भर जाती है हर बारिश में,
मैं समझता हूँ ये खाई नहीं जाने वाली ।

चीख निकली तो है होठों से, मगर मद्धम है,
बद कमरों को सुनाई नहीं जाने वाली ।

तू परेशान बहुत है, तू परेशान न हो,
इन खूदाग्नो की खूदाई नहीं जाने वाली ।

आज सड़को पे चले आग्नो तो दिल बहलेगा,
बद गजलों से तन्हाई नहीं जाने वाली ।

ये सारा जिस्म झुककर बोझ से दुहरा हुआ होगा,
 मैं सजदे में नहीं या, आपको धोला हुआ होगा ।¹

यहाँ तक भाते-भाते सूख जाती हैं कई नदियाँ,
 मुझे मालूम है पानी कहीं ठहरा हुआ होगा ।

गजब ये है कि अपनी मौत की आहट नहीं सुनते,
 वो सबसे सब परीक्षा हैं वहाँ पर क्या हुआ होगा ।

छुम्हारे शहर में ये शोर सुन-सुनकर तो लगता है,
 कि इसानो के जगल में कोई हाँका हुआ होगा ।

कई फाँके बिताकर मर गया जो उसके बारे में,
 वो सब कहते हैं अब, ऐसा नहीं, ऐसा हुआ होगा ।

यहाँ तो सिर्फ गूँगे और बहरे सोग बसते हैं,
 खुदा जाने यहाँ पर किस तरह जलसा हुआ होगा ।

चलो, अब यादगारो की अंधेरी कोठरी खोलें,
 कम-भङ्ग-कम एक वो चेहरा तो पहचाना हुआ होगा ।

रोज जब रात को बारह का गजर होता है,
यातनाबो के झँघरे में सफर होता है ।

कोई रहने की जगह है मेरे सपनों के लिए,
वो धरौदा सही, मिट्टी का भी घर होता है ।

सिर से सीने में कभी, पेट से पाँवों में कभी,
एक जगह हो तो कहे दब इधर होता है ।

ऐसा लगता है कि उड़कर भी कहीं पहुँचेंगे,
हाथ में जब कोई टूटा हुआ पर होता है ।

सर के वास्ते सड़को पे निकल आते थे,
धब तो आकाश से पथराव का डर होता है ।

जिंदगानी का कोई मकसद नहीं है,
 एक भी कद आज आदमकद नहीं है ।

राम जाने किस जगह होंगे कबूतर,
 इस इमारत में कोई गुम्बद नहीं है ।

आपसे मिलकर हमे अक्सर सगा है,
 हुस्न में अब जब ए अमजद नहीं है ।

पेड़ पीछे हैं बहुत बीने तुम्हारे,
 रास्ते में एक भी बरगद नहीं है ।

मकददे का रास्ता अब भी खुला है,
 सिफ आमदरफ त ही जायद नहीं है ।

इस अमन को देखकर किसने कहा था,
 एक पत्थी भी शायद यहाँ नहीं है ।

वो निगाहें सलीब हैं,
हम बहुत बदनसीब हैं ।

भाइए घाल मूद लें,
ये नजारे अजीब हैं ।

जिदगी एक खेत है,
घोर साँसें जरीब हैं ।

सिलसिले खरम हो गए,
यार अब भी रकीब हैं ।

हम कही के नहीं रहे,
घाट औ' घर करीब हैं ।

आपने ली छुई नहीं
आप कसे अदीब हैं ।

उफ नहीं की उजड़ गए,
सोग सचमुच गरीब हैं ।

जिदगानी

एक भी व

राम जाने

इस इमारत

घापसे मिल

हुस्न मे अब

पेड पीछे हूँ

रास्तो में एव

मैकदे का रास्ता

सिफ आमदरप त

इस चमन को देख

एक पछी भी र

भ्राज बीरान भपना घर देखा
तो कई बार भाक कर देखा ।

पाँव टूटे हुए नजर आए,
एक ठहरा हुआ सफर देखा ।

होश मे भा गए कई सपने,
भ्राज हमने वो खँडहर देखा ।

रास्ता काटकर गई बिल्ली,
प्यार से रास्ता भगर देखा ।

नालियो में हयात देखी है
गालियों में बडा भसर देखा ।

उस परिदे को चोट खाई तो,
भापने एक-एक पर देखा ।

हम खडे थे कि ये जमी होगी,
चल पड़ी तो इधर उधर देखा ।

तुमको निहारता हूँ सुबह से ऋतम्बरा,
 अब शाम हो रही है मगर मन नहीं भरा ।

खरगोश बन के दौड़ रहे हैं तमाम ख्वाब,
 फिरता है चादनी में कोई सच डरा डरा ।

पीछे झूलस गये हैं मगर एक बात है,
 मेरी नजर में अब भी चमन है हरा भरा ।

लबी सुरग-सी है तेरी जिंदगी तो बोल,
 मैं जिस जगह खड़ा हूँ वहाँ है कोई सिरा ।

माथे पे रखके हाथ बहुत सोचते हो तुम,
 गगा कसम बताओ हमें क्या है माजरा ।

आज बीरान अपना घर देखा
तो कई बार भाक कर देखा ।

पाँव टूटे हुए नजर आए,
एक ठहरा हुआ सफर देखा ।

होश में भा गए कई सपने,
आज हमने वो खँडहर देखा ।

रास्ता काटकर गई बिल्ली,
प्यार से रास्ता भ्रगर देखा ।

नालियो में हयात देखी है
गालियों में बडा भसर देखा ।

उस परिदे को चोट आई तो,
आपने एक-एक पर देखा ।

हम खडे थे कि ये अभी होगी,
चल पड़ी तो इधर उधर देखा ।

मरना लगा रहेगा यहाँ जी तो लीजिए,
 ऐसा भी क्या परहेज जरा-सी तो लीजिए ।

धब रिद बब रहे हैं जरा तेज रबस हो,
 महफिल से उठ लिये हैं नमाजी तो लीजिए ।

पत्तो स चाहते हो बजें साज की तरह
 पेड़ों से घाप पहले उदासी तो लीजिए ।

सामोश रह के तुमने हमारे सवाल पर
 कर दी है शहर भर में मनादी तो लीजिए ।

ये रोशनी का दद ये सिहरन ये धारज,
 ये बीज जिंदगी में नहीं थी तो लीजिए ।

फिरता है कैसे-कसे खयाल के साथ वो,
 उस घादमी की जामातलाशी तो लीजिए ।

हो गर्द है पीर पबत सी, पिघलनी चाहिए,
इस हिमालय से कोई गगा निकलनी चाहिए ।

भाज यह दीवार, परदो की तरह हिलने लगी
शत लेकिन पी कि ये बुनियाद हिलनी चाहिए ।

हर सडक पर, हर गली मे, हर नगर, हर गाँव मे,
हाथ सहगते हुए हर लाश चलनी चाहिए ।

सिफ हगामा खडा करना मेरा मकसद नही,
मेरी कोशिश है कि ये सूरत बदलनी चाहिए ।

भरे सीने मे नही तो तेरे सीने मे सही,
हो कही भी भाग, लेकिन भाग जलनी चाहिए ।

अपाहिज ब्यथा को वहन कर रहा हूँ,
तुम्हारी कहन थी, कहन कर रहा हूँ ।

ये दरवाजा खोलो तो खुलता नहीं है,
इसे तोड़ने का जतन कर रहा हूँ ।

अंधेरे में कुछ जिदगी होम कर दी,
उजाले में अब ये हवन कर रहा हूँ ।

वे सम्बन्ध अब तक बहस में टंगे हैं,
जिन्हें रात - दिन स्मरण कर रहा हूँ ।

तुम्हारी धरुन ने मुझे तोड़ डाला
तुम्हें क्या पता क्या सहन कर रहा हूँ ।

मैं अहसास तक भर गया हूँ लबालब,
तेरे आंसुओं को नमन कर रहा हूँ ।

समालोचकों की दुआ है कि मैं फिर,
सही शाम से आचमन कर रहा हूँ ।

इस नदी की धार में ठंडी हवा धाती तो है।
नाव जखर ही सही, लहरों से टकराती तो है ।

एक बिनगारी कहीं से दूढ़ लामो दोस्तो,
इस दिए में तेल से भीगी हुई बाती तो है ।

एक खंडहर के हृदय - सी, एक जंगली फूल सी,
आदमी की पीर गूमी ही सही, गाती तो है ।

एक चादर साँझ ने सारे नगर पर डाल दी,
यह अंधरे की सडक उस भोर तक जाती तो है ।

निवचन मैदान में लेटी हुई है जो नदी,
पत्थरो से, झोट में, जा जाके बतियाती तो है ।

दुख नहीं कोई कि अब उपलब्धियों के नाम पर,
घोर कुछ हो या न हो, आकाश सी छाती तो है ।

कैसे मजर सामने आने लगे हैं,
गाते गाते लोग चिल्लाने लगे हैं ।

घब तो इस तालाब का पानी बदल दो
ये कोंवल के फूल कुम्हलाने लगे हैं ।

वो सलीबों के करीब आए तो हमको
कायदे कानून समझाने लगे हैं ।

एक कब्रिस्तान मे घर मिल रहा है,
जिसमे तहखानो से तहखाने लगे हैं ।

मछलियो मे खलबली है, अब सफीने,
उस तरफ जाने से कतराने लगे हैं ।

धौलवी से डाट खाकर अहले भक्तब,
फिर उस आयत को दोहराने लगे हैं ।

घब नई तहजीब के पेशे - नजर हम,
घादमी को भूतकर खाने लगे हैं ।

फिर धीरे धीरे यहा का मौसम बदलने लगा है
वातावरण सी रहा या अब भ्रॉख मलने लगा है ।

पिछले सफर फी न पूछा, टूटा हुमा एक् रथ है,
जो हक गया था कही पर, फिर साथ चलने लगा है ।

हमको पता भी नही था, वो भाग ठडी पडी थी
जिस भाग पर आज पानी सहसा उबलन लगा है ।

जो आदमी मर चुके थे, मौजूद हैं इस सभा मे,
हर एक सच कल्पना से आगे निकलने लगा है ।

ये धोषणा हो चुकी है, मेला लगेगा यहा पर,
हर आदमी घर पहुँचकर, कपडे बदलने लगा है ।

बातें बहुत हो रही हैं, मेरे तुम्हारे विषय मे,
जो रास्ते में खडा था पवत पिघलने लगा है ।

घटियो की गूँज कानो तक पहुँचती है,
इक नदी जसे दहानो तक पहुँचती है ।

अब इसे क्या नाम दें ये बेल देखो तो,
कल उगी थी आज शानो तक पहुँचती है ।

खिडकियाँ नाचीज गलियो स मुखातिब हैं,
अब लपट शायद मकाना तक पहुँचती है ।

आशियाने को सजाओ तो समझ लेना,
अब कसे आशियानो तक पहुँचती है ।

तुम हमेशा बढहवासी में गुजरते हो,
बात अपनी से बिरानो तक पहुँचती है ।

सिफ आँखें ही बची हैं चन्द चेहरो स,
वेजुर्बा सूरत जुबाना तक पहुँचती है ।

अब मुअज्जिन की सदाएँ कोन सुनता है
चीख चिल्लाहट अजानो तक पहुँचती है ।

एक कबूतर, चिट्ठी लेकर, पहली पहली बार उड़ा
मौसम एक गुलेल लिये था पट से नीचे आन गिरा ।

बजर घरती भूलसे पौधे, बिखरे कांटे, तेज हवा
हमन घर बैठे-बैठे ही सारा मजर दस लिया ।

बटाना पर खड़ा हुआ तो ध्राप रह गई पाँवा की,
सोचा कितना बोझ उठाकर मैं इन राहो से गुजरा ।

सहन को हो गया इकट्ठा इतना सारा दुख मन मे,
कहने को हो गया कि देखो धब मैं तुमको भूल गया ।

धीरे धीरे भोग रही हैं सारी ईंटें पानी मे,
इनको क्या मालूम कि आगे चलकर इनका क्या होषा ।

(‘साये मे धूप से)

शब्दार्थ-टिप्पणी

योगीन्दुदेव

1 विभिष्णऊ-भिन्न । परमप्यु परम + अप्यु-परमात्मा । पश्चिउ-पश्चित (ज्ञानी)
अथ—जो देह स भिन्न परम समाधि मे ठहरे हुए परम आत्मा को जानता है, वही
जाग्रत (ज्ञानी) होता है ।

2 कोहु-क्रोध । मउ-मद । माणु-मान । ठाणु-स्थान । भाणु-ध्यान ।
निरजनु-निरजन ।

अथ—जिसमे न क्रोध, न मोह, न मद, न माया, न मान, है तथा जिसका न कोई
(विशेष) स्थान तथा ध्यान (स्वरूप) है, वही निरजन (निष्कलक) आत्मा है ।

3 बि-भी । एषि-नहीं । छिवइ-छूता है । एियमें-अनिवायत ।

अथ—जो देह मे रहता हुआ भी अनिवायत देह को भी बिल्कुल ही नहीं छूता
तथा जो देह के द्वारा भी नहीं छुमा जाता है, वह परमात्मा है ।

4 परिटठियह-स्थित । फुडु-वास्तविक रूप से ।

अथ—समता भाव मे ठहरे हुए योगियो के (हृदय से) परमानन्द उत्पन्न करता
हुआ जो कुछ प्रकट होता है, उसे ही परमात्मा समझो ।

5 अतिय-है । विसाउ-विपाद ।

अथ—जिसमे न पुण्य है, न पाप न ह्य, न विपाद तथा जिसमे एक भी दोष नहीं
है वही अवस्था निर्दोष (सहज) है ।

6 म-मत । लक्खण-लक्षण । पर-पर, दूसरा । मणमि-कहता हूँ ।
मुणि-मनुष्य । भेउ-भेद ।

अथ—ह मनुष्य जीव (आत्मा) और अजीव (अनात्मा) को एक मत समझ ।
इनमे लक्षण भेद है । अभेदरूप आत्मा को जान और जो इससे अथ है वह
अथ ही है (ऐसा) मैं कहता हूँ ।

7 पोबिखवि-देखकर । मा-मत । वमु-ब्रह्म ।

अथ—हे जीव देह क जरा मरण को देखकर तू भयभीत मत हो । आत्मा जरा
और मृत्यु से रहित परम ब्रह्म है, ऐसा जान ।

8 सम्मादित्ठि—सम्यक दृष्टि । कम्मई—कर्मों से । लहु—शीघ्र । मुच्चई हो जाता है ।

अर्थ—आत्मा से आत्मा को जानता हुआ व्यक्ति सम्यकदृष्टि (ज्ञानी) होकर ऐसा व्यक्ति शीघ्र कर्मों से छुटकारा पा जाता है ।

9 विमिण्णउ वण्णु—विभिन्न वण । चित्तक—बुरा रग । भण्णु—समझो । तणु—दुबल । थूल—थूल ।

अर्थ—मैं गोरा हूँ, काला हूँ, चित्तकबरे रग का हूँ । पतले शरीर वाला हूँ, शरीर वाला हूँ, ऐसा सोचने वाले का मूढ़ समझो ।

10 लहेविणु—पाकर । गलेइ—नष्ट होता है । जिमु जिमु—जैसे जैसे । जो योगी (साधक) ।

अर्थ—हे साधक, जैसे जैसे मोह नष्ट होता वैसे-वैसे समय पाकर मनुष्य जागृति (पूरणान) का प्राप्त करता है । (इस तरह मनुष्य) अग्नि आत्मा को जान लेता है ।

11 णिमल्लउ—निमल । सत्थ पुराण हूँ—शास्त्र पुराण । तव चरणु—तप (तपस्या) । कि—क्या ।

अर्थ—जिनके निज मन में निमल आत्मा अनिवायत नहीं बसता है उनसे शास्त्र पुराण (का ज्ञान) तथा तपस्या मोक्ष प्रदान कर सकते हैं ? नहीं ।

12 गऐं—राग । हियवडए—हृत्पथ । दप्पणि—दपण । सहलए—मलिन । प्रतिबिम्ब ।

अर्थ—जैसे मल दपण में प्रतिबिम्ब नहीं दिखाई देता है वैसे ही राग (आर्मा) रगे हुए हृदय में समत्वयुक्त आत्मा नहीं दिखाई देता है । यह सदेह है, इसे समझ ।

15 देउले—देवालय (मन्दिर) सिलए—शिला (पत्थर) । लिप्पइ—मूर्ति । चित्र । अखउ—अखण्ड । णाणमउ—ज्ञानमय । सिवु—शिव (मगलमय) ।

अर्थ—परमात्मा न मन्दिर में है, न पत्थर में, न (गढी हुई) मूर्ति में, न चित्र अखण्ड निरञ्जन ज्ञानमय तथा मगलमय आत्मा समत्व भावना से युक्त में बसा हुआ है ।

14 जाणवि—जानकर । भण्णवि—समझकर । भावउउ—भाव । चरणु—आच

15 जाँवइ-जब तक । उपसर्ग-शात रहता है । सजदु-सयमी । मसामह-कपाय (मनोविकार) ।

अर्थ—ज्ञानी तब तक शान्त चित्त रहता है जब तक वह सयमी (जितेन्द्रिय) बना रहता है । कपायो (मनोविकारो) के वश में गया हुआ जीव असयमी हो जाता है ।

16 पाण-ज्ञान । विहीणहँ-विहीन । बहुएँ-बहुत । विरोलियई-विलोडन । चीत्पउउ-चिकना ।

अर्थ—हे जीव, ज्ञान विहीन व्यक्ति के लिए तू मोक्ष (परम शांति) की स्थिति को मत मान । बहुत मधे हुए पानी के द्वारा हाथ चिकना नहीं होता है ।

17 मुजतु-मोगता हुआ । पुणु-पुन (फिर) मचित्त-सचित ।

अर्थ—अपने कम फल को भागते हुए भी जो उसमें आसक्त नहीं होता उसे कम फिर नहीं बाँधता और उसके मचित्त कम भी नष्ट हो जाते हैं ।

18 राय भोस-रागद्वेष । परिटिठया-स्थित । परिहरिवि-त्याग कर ।

अर्थ—राग द्वेष को छोड़ कर जो जीवों को समान दृष्टि से देखते हैं वे सम भाव में स्थित हुए निर्वाण (परम शांति) प्राप्त करते हैं ।

19 भत्लाह-भले लोग । एासति-नष्ट हो जाते हैं । खलेहि-दुष्ट । वइसाएउ-वशवानगर (अग्नि) । लोहहँ-लोहा । घएँहि-हथोड़ों से ।

अर्थ—दुष्टों के ससग से भले लोगों के गुण भी नष्ट हो जाते हैं । (ठीक ही है) लोहे के साथ मिली हुई अग्नि हथोड़ों से पीटी जाती है ।

20 बत्तिय-वस्त्र । जिष्णु-जीए ।

अर्थ—जिस प्रकार ज्ञानी जीए वस्त्र (धारण करने) से देह को जीए नहीं मानता उसी प्रकार क्षीए देह से आत्मा को क्षीए नहीं मानता ।

21 पाणि-ज्ञानी ।

अर्थ—हे जीव जिस प्रकार ज्ञानी वस्त्र को देह से भिन्न मानता है उसी प्रकार आत्मा से देह को अलग ही मानता है ।

22 ति पयारो-तीन प्रकार । निमतु-नि सदेह ।

अर्थ—आत्मा तीन प्रकार की होती है —परम आत्मा (पूए आत्मा) अन्तरात्मा (जाग्रत आत्मा) और बहिरात्मा (मूर्छित आत्मा) । तू नि सदेह बहिरात्मा को छोड़ कर अन्तरात्मा के द्वारा परम आत्मा को प्राप्त कर ।

23 मिच्छा-मूर्छा । मुएई-जानता है । भमेई-चक्कर काटता है ।

अर्थ—मूर्छा (अज्ञान) से मूढ़ बना हुआ व्यक्ति परम आत्मा को नहीं जानता । जिसे जितेन्द्रिय व्यक्तियों द्वारा बहिरात्मा कहा गया है वह निश्चय ही ससार में चक्कर काटता है ।

24 गिहि-वावार-गृह व्यापार (गृहस्थ के काय) । ह याहेउ-त्याज्य अत्याज्य (त्याग करने योग्य व ग्रहण करने योग्य) अणुदिनु-अनुदिन । भायहिं—ध्यान करते हैं । लहु—शीघ्र ।

अर्थ—गृहस्थ के कार्यों में लग हुए (भी) जा त्याज्य और ग्राह्य (बातों) को समझते हैं तथा प्रतिदिन जितेन्द्रिय दिव्य आत्मा का ध्यान करते हैं वे शीघ्र निर्वाण प्राप्त करते हैं ।

25 लिप्पियइ-लिप्त होता है । कमा वि-कदापि (कभी भी) अप्प सहावि-आत्म स्वभाव ।

अर्थ—जिस प्रकार कमल पत्र जल से कभी भी लिप्त नहीं होता उसी प्रकार आत्म स्वभाव रक्षण करने वाला (व्यक्ति) कर्मों (कर्मफल) से लिप्त नहीं होता ।

26 रोस-क्रोध या द्वेष । सामाइउ-(रागद्वेष रहित) समभाव । केवलि-मुक्ति का अधिकारी साधु । एम-इस प्रकार ।

अर्थ—प्रासक्ति और क्रोध दोनों को छोड़कर जो समभाव का अनुभव करता है, उसे साम्यावस्था में समझो, इस प्रकार वह केवली (मुक्ति का अधिकारी) है ।

15 जावइ—जब तक । उपसमई—शांत रहता है । सजदु—सयम कपाय (मनाविकार) ।

अथ—पानी तब तक शांत चित्त रहता है जब तक वह सयमी (रहता है) । कपायो (मनोविकारो) के वश भे गया हुआ जी जाता है ।

16 पाण—ज्ञान । विहीणहँ—विहीन । बहुएँ—बहुत । विरोलि चोत्पउउ—चिकना ।

अथ—हे जीव, ज्ञान विहीन व्यक्ति के लिए तू मोक्ष (परम शांति) मत मान । बहुत मये हुए पानी के द्वारा हाथ चिकना नहीं

17 मुजतु—भोगता हुआ । पुणु—पुन (फिर) मचिउ—सचित ।

अथ—अपने कम फल को मागत हुए भी जो उसमें आसक्त नहीं फिर नहीं बाधता और उसके सचित कम भी नष्ट हो जाते

18 राय त्पेस—रागद्वेष । परिटिठया—स्थित । परिहरिवि—त्याग

अथ—राग-द्वेष को छोड़ कर जो जीवों को समान दृष्टि से देखे में स्थित हुए निर्वाण (परम शांति) प्राप्त करते हैं ।

19 भल्लाह—भले लोग । यासति—नष्ट हो जाते हैं । खलेहि—

वशवानगर (अग्नि) । लोहहँ—लोहा । घएँहि—इषोडों से अथ—दुष्टों के ससग से भले लोगों के गुण भी नष्ट हो जा लोहे के साथ मिली हुई अग्नि इषोडों से पीटी जाती है

20 वस्त्रि—वस्त्र । जिणु—जीण ।

अथ—जिस प्रकार ज्ञानी जीण वस्त्र (धारण करने) से देह उसी प्रकार क्षीण देह से आत्मा को क्षीण नहीं मानता

21 पाणि—ज्ञानी ।

अथ—हे जीव जिस प्रकार ज्ञानी वस्त्र को देह से भिन्न आत्मा से देह को अलग ही मानता है ।

22 ति पयारो—तीन प्रकार । निमतु—नि सदेह ।

अथ—आत्मा तीन प्रकार की होती है —परम आत्मा (जाग्रत आत्मा) और बहिरात्मा (मूर्छित आत्मा) को छोड़ कर अन्तरात्मा के द्वारा परम आत्मा को प्रा

23 मिच्छा—मूर्छा । मुण्डे—जानता है । भमेइ—चक्कर

अथ—मूर्छा (अज्ञान) से मूढ़ बना हुआ व्यक्ति परम आत्मा जिस जितेन्द्रिय ब्यक्तियों द्वारा बहिरात्मा कहा ससार में चक्कर काटता है ।

बोहावसी

- 6 सुतर-कपास । टकिका-टाँकी । ख्वाम-ख्वानी (बडइयो का लोहे का एक औजार) । सासति-कष्ट ।
- 11 कदरी-केला । बदरी-बर । पनस-कटहल ।
- 12 मगह-मगघ । गया-एक तीर्थ का नाम (तथा गया बीता) ।
- 15 गादुर-चमकादड़ । 18 मोटी रोटी मार-रोटी की मोटी मार मारो । (पेट भर खिलाकर उसे बश में करो) । 24 पाही खेती-जिस गाव में रहते हो उससे दूर जाकर दूसरे गाव में खेती करना । लगन-प्रासाक्त । बट-राहगीर । मग-रास्ते पर ।
- 25 रीभि-प्रेम । खीभि-रोप ।
- 26 करपत-खीचता है ।

तुलसीदास

गीतावली

- 1 फरनि-फल । सरनि-प्रतिद्वि द्वाता, होड । सरसरनि-लडखडाना ।
- 2 कधर-कधे । उपवीत-यज्ञोपवीत ।
- 3 सुखमा दही-कामदेव रूपी ग्वाले ने शोमा रूपी सुरभि से श्रृ गार रूपी दूध दुहकर जो अमृतमय दही तैयार किया था । मयि माखन महीरी-उसे मयकर ही मखन रूप राम और सीता रचे हैं तथा सारे लोको की शोमा उस बचा हुआ मट्टा है ।
- 4 अगहुड-प्रागे बढ़ने के लिए उतावला । गडत गौड पक-पर मानो सकोच रूप दलदल भ गडे जाते हैं । फनिक-साप ।
- 5 गौन-प्रप्रधान, महत्त्वहीन । आरत-प्रारति-दीन-दु खी का कष्ट दूर करने वाले ।
- 6 कीर-तोता । छति-लाहु-हानि लाभ । खीर नीर-दूध-पानी ।

धैराग्य-सदीपनी

- 5 बिलाहि-नष्ट हो जाते हैं । 11 मसि-स्याही । 14 चाम-चमडा । 15 सुपच-श्वपच, (निम्न जाति का व्यक्ति) ।

जानकी मगल

- 1 बनज-कमल । 2 कौसिन-विश्वामित्र । 4 दस कधर-रावण । 5 कु भज-अगस्त्य मुनि । 13 करव-कमल । 15 विबुध-देवता ।

कवितावली

- 1 मधवा-इंद्र । लोमम-लोमस-ऋषि । 2 अयानी-मूख । 3 सुठि-अत्यंत सुंदर । 6 पनही-जूता ।

धरवै रामायण

- 2 मख-यज्ञ । 4 कोल-एक जगती जाति भील । कसस-जोति-अगस्त्य ऋषि ।

बोहावली

- 6 सुतर-कपास । टकिका-टाँकी । ख्वाम-ख्वानी (बडइयो का लोहे का एक औजार) । सासति-कण्ट ।
- 11 कदरी-केला । बदरी-वेर । पनस-कटहल ।
- 12 मगह-मगघ । गया-एक तीर्थ का नाम (लया गया बीता) ।
- 15 गदुर-चमकादड । 18 मोटी रोटी माह-राटी की मोटी मार मारो । (पेट भर खिलाकर उसे वश में करा) । 24 पाही खेती-जिस गाव में रहते हों उससे दूर जाकर दूसरे गाव में खेती करना । लगन-भ्रासक्ति । बट-राहगीर । मग-रास्त पर ।
- 25 रीभि-प्रेम । खीभि-राय ।
- 26 करपत-खीचता है ।

रसखान

भक्ति 1 पुरंदर-इंद्र । कालिन्दी-यमुना नदी । 3 कलधौत-सोना चादी ।
6 छाज-छाजन, मूप । अछिया-छाछ (मटठा) नापने या रखने का
बतन ।

बनलीला 8 मार-कामदेव । गौरस लीला 9 बारही-इस पर । मौंडी-लटकी ।
भतराड-मयुरा व दावन के बीच का एक स्थान । वनीडी-वशीमृत
(कृतज्ञ) । डौंडी-मुनादी । दधिदान 11 भाजन-बतन । सौ-सौगध ।
मह करि-कठिनाई से । उलाहना 12 मेव-लूटमार करने वाली जाति
विशेष । मिलन 16 बक-तिरछी । वशी 21 वनितानि-स्त्रिया ।
हासुरी-हंसी । 22 पवारो-दूर हटाना । 23 ढारो-ढग । जमकाल-
मृत्यु । 24 मन-कामदेव । भ्रमरगीत 31 गाडरु-गारुडी, साप का
जहर उतारने वाला । कारे विसारे-विष वाला काला सप । 34 भेती-
होती । बकोटती-नाखूनो से नोचना । रिभावन को-रिभाने का ।

दानलीला 36 मुरही तें-प्रात काल से ही/भक्त-भगडते हो । मीरखान-उच्च
अधिकारी । 38 मवासी-किलेदार, नायक । 40 बादी-भगडालू ।
फनादी-भगडा करने वाला । साट खाह-दूसरो का धन लूटना । भाती-
अम्यस्त । 41 नियाब-न्याय । राव-राजा ।

प्रेम 12. अहमिति-ग्रहकार ।

सुन्दरदास

गुह महिमा

1-4 घात-ग्रहित । ससेइ-सशय । प्रसाद-प्रस नता (कृपा) ।

उपदेश

5-6 मोट-गठरी । वाम-पत्नी ।

काल की विकरालता

7-11 विलायत-नष्ट होना । दमामा-नगाडा । छेहा-अत । सेहा-धूल, राख । निहचै-निश्चय । निरजन-निराकार ब्रह्म । धामस धूमस-धूम धाम (ससार का ज्वाल) ।

देह एव जगत की नश्वरता

12-13 करतार-जगत् का कर्ता, ईश्वर । अभावनो-अप्रिय । नदन-पुत्र । हाथ भे घोरा लया-सफेद वस्त्र धारण किए ।

भाशा तडगा

14-16 बिल्लात-विलाप करना । कधी-कभी । अन-अन्य ।

आश्वासन

17-19 पाहन-कुछ नहीं खाक (लाक्षणिक अर्थ) पाहन म पहु चाय धरेगो-नष्ट कर देगा ।

विश्वास

20-21 खेचर-पक्षी । पीले-पालन पोषण करता है । तीख-सतुष्ट । भोगे-दुखी, उदास ।

मूलता

24-26 कीरो-चीटी । मरीचिक-किरण ।

बाणी का महत्व

चार पदारथ-धन, अर्थ, काम और माक्ष । घाठ हूँ सिद्धि-भाठ सिद्धियां । अणिमा, महिमा, गरिमा, सधिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशित्व वशित्व । नवोनिधि-कुबेर की नो निधिमा । पद्म, महापद्म, शल मकर, कच्छप मुकुद, कुद, नीम, खव ।

पद्माकर

भक्ति

धिर—स्थिर । कदर—गुफा । अकारण—व्यथ, बिना किसी काम के । बैस—उमर
दुरास—दुराशा (न पूरी होने वाली भाशा) । कायो—शरीर । चोरे—चारो घोर
से । लागि—के लिए, लगकर । दीह—दीघ, बड़े बड़े । छोस—दिन । पिपीलिका—
चिऊटी । फील—हाथी । तन—तनय, पुत्र । क्लाम—वचन, प्राधना पुकार । खोरिन
—तग गलियों म । दुरी—छिप जाओ । आढा—आड म, बीच म हो गया है ।
रच—अल्प, स्वल्प । नेक—नेक—नहे—नहे । ईदुरी—घडा रखने के लिए सिर पर
रखा हुआ कपडे का वतु साकार भेडरा (ईनू बिना) । मलार—एक राग का नाम ।
फाग—होली । नाय—उडेलकर, गिराकर । अबीर—गुमाल, लाल रग की बुकनी ।
रोरी—रोरी, लाल रग का चूरा या बुकनी जिसका तिसक भी लगाते हैं । बिहद—
बेहद, बहुत, असीम, अघिक । स्योरी—शवरी भीलनी (रामजा ने जिसके बेर खाए
ये) गौतमतिया—गौतम की पत्नी, अहत्या घना—घ ना नाम का एक जाट भक्त ।
सदना—इस नाम का एक ईश्वर भक्त कसाई जिसका भगवान ने उद्धार किया ।
हाथी—गजराज । साधन—साधु लाग, भक्त लाग । शवरी—शबरी, भीलनी जिसके
बेर भगवान राम ने प्रेम स खाये थे । वेद भेद—वेद का रहस्य । सुमृत—स्मृतिग्रथ ।
ठहराव—निश्चित किया है, ठहराया है । जसूनन—दूतो से । कामगया—कामधेनु,
स्वर्ग की एक गौ जो सब कामनाओं को पूरा करती है । कठवति—सूखकर कडा हो
जाना । आइवो—भाने को, भाने योग्य । पाइवा—प्राप्त करने योग्य, प्राप्तव्य । नेन
मु दे पै—आँख बन्द होने पर, (मर जाने पर) । जकि—सी—विस्मित भोचवकी सी ।
काया—शरीर । मीच—मृत्यु मौत । चेत—सावधान होना हाश सम्भालना, बोध
हाना । बिसासिनी—विश्वासघातिनी । विलई—प्रलय मौत । प्रयास—यत्न
परिश्रम । लीक—लोक, लकीर, भाग्यरेखा । बघम्बर—मगछाला । दिगम्बर—
नगा । दूब—दूर्वा घास । पचपावक—पचाग्नि । साहस—हौसला, जसाह । वणु—
बासुरी । सलीती—थमी । छीजी—क्षीण हुई नष्ट हुई । रेनु—बालू रेत । भीती—
दोबार । रोती—रिक्त, खाली । खलीती—खरीता, चमडे वा थला, जेव बटुआ ।
छन भगुर—क्षण भर मे नष्ट हो जाने वाला । करोरा—कटोरा । ती—तिया स्त्री
पत्नी । गोतो—सगोत्री रिश्तेदार ।

प्रकृति बखान

लरजत—हिलते हैं । बिसासी—छली, कपटी विश्वासघाती । पगत—पगना । बीधिन
—गलियों से । बगरो—छाया हुआ, बिस्तीए, व्यापक । बवेलिया—कीयल । मास्त—
बायु । नादत—शब्द करती है । दररे—घबके, तेजी से भागे डकेलना ।

वीर रस

सीम-सीमा । सगर-युद्ध । फलका—प्राकाश तारी-वाली । तमका-तमतमाहट, तीव्रता, क्रोध की तेजी, जोश । जाहिर-प्रकट । रीदा-घनुष की डोरी । सिलाही—सैनिक, वक्त्र पहने हुए सिपाही । ऐल—इलाका, प्रदेश । निसान-युद्धपत्राका, नगाडा । पाकसासन—इद्र (उत्तर दिशा) । बिहाली—फिर से नई आभा, ताजगी ।

दानधीर

सुहेम—सुवर्ण । गिरिजा—पावती । गजानन—गणेश । गोई—छिपाकर । बिलु ड—हाथी ।

गगा स्तवन

विधि—ब्रह्मा । गिरिस—शिव । अघहर—पापनाशक । छेम—क्षेम, कल्याण । सुरसिधु—गगा । राका—पूर्णिमा की रात । पताका—झण्डी । भौन-भवन, घर । रावरे—प्रापके । बिन छारे—क्षण किए बिना, बिना छुड़ाए । पापपुज—पाप समूह । नभ—प्राकाश ।

गौतमतिया

अहल्या गौतम ऋषि की परनी थी, जिसे इद्र के दुराचार के कारण एव गौतम के शाप के कारण पत्थर बनना पडा था । इस अहल्या का उद्धार श्री रामचन्द्रजी के चरणों की धूल के स्पर्श के कारण हो गया था ।

सूर्यमल्ल मिश्रण

- 1 विमुहा—विमुख । बघवाव—बाघ की गध ।
- 2 की—क्या । छक पगाम—बल मे मस्त ।
- 3 हाथल—हस्त प्रहार । भ्राहण—मार डालता है ।
- 4 भ्रवट—भ्रायु । केहा—रुमा । जेय—जहा ।
- 5 गयद—गजद । गवय—गंडा । गिडराज—शूकरराज । साखडा—मुस्तद । मड—मचा रह हैं ।
- 6 डोहें—ध्वस कर रहे हैं । द्रह—जलाशय । ऊंडा—गहरा । दीह—दीध । सीहण—सिहनी । सहल—सर । सक्क—शायद ।
- 7 तुडा—मुख के अप्रमाण से । हेक्ण—अवेल । घू दिया—रौद्र डाला । पाथर—विस्तर ।
- 8 पाठडा—सूधर के नीजवान बच्चे । कवला—सूअर । भाडा भाडा—तितर बितर ।
- 9 सुहडा—सुभट । सिकारसी—सिकार कर लेंगे । माजसी—तोड डालगा ।
- 10 पाधरौ—सीधा । पू गी—सपेरा का वाचयत्र ।
- 11 घवल—बल । पयप—करता है । आवगी—सपूग ।
- 12 करवाल—तलवार । डाहजहिधा—बजने पर । जबाल—नगाडे ।
- 13 साकल—शृ खला । जिके—जो । घाल—डालते हैं ।
- 14 पाख—बिना । दुमनी—उदास ।
- 15 बाढ—काट डालता है । पीडे—सोता है ।
- 16 बाजी—कहतामो । हाथम—हाथ का पजा । पाड—नष्ट कर देता है ।
- 17 सारखा—समान । विण्टा—नष्ट हो गये ।
- 18 ब्रेस—भ्रायु । अजका—चचल उदत ।
- 19 छाटी—कीर्ति । नेप—वृद्धि पर है । कोही—किमी ने ही ।
- 20 भाण—लाते हैं । कुबगा—शत्रुमो को ।
- 21 पदल—छत । अपणाय—अपना सनता है । विसी—कौन, कौनसा ।

- 22 ठीणी—उपालभ । ईतो—देशो । सूरी महल—वीर महिला ।
 23 सहणी—सहन करने वाली । लजाण—लज्जित करने वाला ।
 24 भूण—गभ को । साव—बच्चा । वाटण री—काटने की ।
 25 जाचा—जच्चाओ । हृद—के । तापण—तापने की अगीठी ।
 26 सलूणो—नमक सहित । समप्प—समर्पित करते हैं ।
 27 साखल घीठा—शृ खला से खुले हुए । बीर जमीरा—भूमडल के अद्वितीय वीर ।
 28 इला—पृथ्वी । पालण—पलने मे । हालरिया—भूले के गीत ।
 29 षण—स्तन । डील—दर । धिया—हुआ । बाला—ह पुत्र ।
 30 काय—बया । बलेबा—जलने के लिए । मरेबा—मरन क लिए ।
 31 प्रभण—कहती है । धार—विचार करके । बलण—सती होना ।
 32 धारा—तलवारो की धारा स । डूगर—पवत ।
 33 न्ह—नही । बास—निवास ।
 34 भालगसी—सुहावगा । सुणिया—सुनने पर । सार बागो—तलवार बजी ।
 35 सौक—सपत्नी । लगाड—लगाव । भला—अच्छी तरह ।
 36 नथी—नही । मुडिया—युद्ध से पीठ दिखान पर । गीदवो—तकिया ।
 37 पूजाणो—पूजित । मीडाणो—भदन किया हुआ । बीजाणो—दुलाया हुआ ।
 घण—अधिक ।
 38 दुरग—किला । कडणो—निकसना ।
 39 बलण—सती होना । बणो—हो । व—उस । बणी—बनो ।
 40 माड—महावर लगा । धारा लागीज—तलवार के घाट उतरे ।
 41 पाछट्टू—फोड डालू । रावत—सरदार । जाम—लडकी ।
 42 लकाल—सिंह । लहे—प्राप्त करता है ।
 43 भोहड—पीछे हटते है । बिचाल—बीच । बटक—दातो से काटता ह ।
 मायड—माता । पूचा—बलाइयो का ।
 44 प्राणा नाहक—प्राणो के ग्राहक, अर्थात् शत्रु । कसियो—कूटिबद्ध ।
 45 वाहुड—वापिस ले लिए जाते हैं । जठ—जहा ।
 46 माहिरो—भात भरने की रस्म । कडूब—कुटुम्ब । वू ब—हाय तोबा ।
 47 एथ—यहा । जणो—उत्पन्न करती है ।
 48 देव—देखने । कीघ—किया । कीस—कसे ।

- 49 टाट—दरिद्रता के कारण टोटे स । सरकाँ—सरबडो की बनी हुई ।
 भ्रमपतिमा—राजाआ के ।
- 50 इसड-ऐस । टोटे—नुकसान पर । जणी मे—जिसमे । पोत—कठाभरण ।
- 51 बिलस—विलाम करते हैं । तामा —नीमत से ।
- 52 बीजड—तलवार । माहे—पकडवर । भ्रत्य—भ्रम, सिये ।
- 53 भीड—सहरा । पडव-शयनागार । छिपारिया—छिपाते समय ।
- 54 गोरण दिन—विवाह के दूसरे दिन । बागा—बजे । उसीसी—तकिया ।
- 55 काम—बया । भीत चिन्तन करता है ।
- 56 डाहल-शास्ता । छागसी—काट डालेंगे । खाँत—रुचि । छकियो—मदमस्त ।
- 57 वाटडी—राह । पडव—रगमहल । धावगौ—सपूण ।
- 58 एकण—एक । दूणादूण—दुगुना ।
- 59 बरहाय—प्रलाप करता है ।
- 60 जक—विधाम । चउत्थ—चौथे ।
- 61 बाभी—माभी । चवार्ता—जूते हुए । बवाल—युद्ध का नगाडा ।
- 62 कुरल—चीदाती है । धीरपिया—धम । दीहर—दिनका ।
- 63 बाड—घर के पास । वामडा—निवास ।
- 64 तूम्ह—तुम्हारा । पडिया पहली—गिरने से पहले ।
- 65 बर बसाविया—बर मोल ले लिये । घाड लूब—आश्रमण हात है ।
 हेली—सखी ।
- 66 ओछाड ढक गया है । बाह—घोडा । बीद—बर । गयण—आकाश ।
- 67 बिसासतो—धीरज बेधाता हुआ । बेग—चाल । बाज—घोडा ।
- 68 सौकरडा—बाणो की बौछार । प्रमाण—तरह । दाहण—गिराने वाले ।
- 69 सिखावियो—सिखलाया । ओज—बल कौशल ।
- 70 सपेखे—दखे । गलबत्यामार—गाढालिगन करके । बाहण—बार करने के लिए ।
 बाल्हा—प्रिय ।
- 71 दरजा—दरारें । भाट—प्रहार । अरराट—घोर मध्यनरव ।
- 72 दुमका—घमाका । मचकाय—मचक रही है ।
- 73 जेज—देर । कटका—सेनाधो का । दाहि—नष्ट करके ।
- 74 पल—मास को । बाल्हे—व्यारे । देसी—देगा । धपाय—तृप्त कर ।
- 75 फील—हाथी । हेके—एक साथ । धपाउही—तृप्त करेंगे ।

- 76 आखता-उपायला । बहोड-वापिस लेकर ।
- 77 धव-पति । मारखी-समान । अनड-उद्धत । डोहै-विलौडित करता है ।
- 78 अजको-उद्धत-चचन । बाग-लगाम ।
- 79 घटिया-डटे हुए । केम-कैसे । दु भात-पकित भेद भिन्न बर्ताव ।
- 80 घजर आणै-शेखी बघारते है । आण-लाते है ।
- 81 मूभ-मुभे । विण-माय बिना मस्तक के ।
- 82 मच-पलग । भावती-समाता ।
- 83 करडी-कठोर । कुचनू-स्तन को । हैदी-का । चोल-आनद विहार का समय । घमरोल-प्रहारो की वर्षा ।
- 84 वर बर-भली भली, बार बार ।
- 85 ओहनी-रोको । सच-सचय कर ।
- 86 आटा-बर । सार-घम । लिमण-लेने के लिए ।
- 87 दायणा-शनुओ पर । इली-दखा ।
- 88 पार रा-शनुओ के । खिण-क्षणमर । मिखडी-महाभारत का कामर पात्र, मोर । जाण-मानो ।
- 89 लू बिमा-भुके हुए । मजाय दीघा-भगा दिये । ऊठे-उठ कर ।
- 90 घर-रखो । मुघाम-यथास्थान । पावा हूत-चरणो मे बरज-ब द कर दो ।

शमशेर बहादुर सिंह

सौंग और नातून बरू तर-कवच ।

गजल 1 मजमून-लेग आदि का विषय ।

गजल 2 हकीकत-यथाथ । सग़ युस-कल्पना । कम निगाही-उपक्षा । दस्तूरे-फिरदौस-स्वर्गिक सविधान ।

गजल 3 जल्वे-दीदार प्रदर्शन । तूर-सीरिया का एक पहाड़, जिस पर हजरत मूसा ने ईश्वर का जलवा देखा था । नाबीना-ग्रथा । कदमरजा-कदम रखना, पदापण । सूए बाम-छत की तरफ । शाखी-चुल बुलापन । हिना-मेंहदी । परवर-परवरिश करने वाला । तरु मीना-अदाज । उजलत गजी-कोन मे या तनहाई में बठ जाना । गदा-फकीर । मीना-शराब की बोतल ।

4 बाब-अध्याय । सुखियाँ-शीपक । दिलनेबाज-दिल को लुभाने वाली । खिलवतो-एका त तनहाई । हिजाब-छिपना, पर्दा करना । आस्ताँ-घर । शबाब-जवानी ।

तीन शेर सय्यार-गृह । मह — चाँद । महर—सूरज । अस्तर—सितारे ।

दुष्यत कुमर

- 1 ह्वालो—सदभों । ओमारे—मायबान, बरामदे । मासूम—निर्दोष ।
- 2 भारजू—इच्छा, बिनती ।
- 3 दरिया—नदी, । खीफ—भय । मायूम—उदाम । राजना—सुराखो ।
- 4 अलावों—तापने क लिए जलाई हुई आग ।
- 7 सजदे—नमाज पढते हुए जमीन पर सर रख कर ईश्वर को प्रणाम करना ।
- 9 भादमकद—मनुष्य के कद जितना । भामदरपत—भाना जाना । जायद—ज्यादा । मैकदे—शराबखाना ।
- 10 सलीब—सूली । जरीब—नापने का फीता । रकीब—दुश्मन । भदीब—साहित्यकार ।
- 11 ऋतम्बरा—। माजरा—मामला ।
- 17 मजर—दृश्य ।
- 19 भाशियान—पासले । मुखातिब—बोल रही है । मुअज्जन—अजान देने वाला । सदाएँ—भावार्थों । अजानो—नमाज के लिए बुलावे ।

